क्षीरभवानी

काश्मीर, भारत

क्षीरभवानी

कश्मीर, भारत

क्षीरभवानी

काश्मीर, भारत

लेखक

संसारचन्द कौल

हिन्दी अनुवाद तथा सम्पादन

जानकीनाथ कौल 'कमल'

संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण

उत्पल पब्लिकेशन

151-सी, जे० एण्ड के० पाकेट

दिलशाद गार्डन, दिल्ली-110095

द्वितीय संस्करण जनवरी 1993

मूल्य 12.00

मुद्रक : भारत फोटोकम्पोज़र्स, दर्शन भवन, शाहदरा-दिल्ली-32

विषय-सूची

दो शब्द

राज्ञी सदा भगवती भवतु प्रसन्नः ॥

मेरे प्रतिभाशाली पिता जी स्वर्गीय पण्डित संसारचन्द कौल की यह हार्दिक इच्छा थी कि उनकी समस्त प्रकाशित एवं अप्रकाशित रचनाएं, जिनकी देश-विदेश में अधिक मांग रही है, जनता के लिए सदा उपलब्ध हों। परन्तु देवी कोव से कश्मीर-मण्डल की पिछले तीन वर्षों की दुःस्थिति के कारण हमारे सारे प्रकाशित ग्रंथ और अन्य असंख्य रचनाएं एवं ग्रंथ आतंकवाद की विकराल अग्नि में स्वाहा हो हो गईं। हमने यह सारे ग्रंथ अब नए सिरे से जोड़ने और एक-एक करके प्रकाशित करने का निश्चय किया है। इस प्रेम-पूर्वक्र प्रयत्न से जहां मेरे पिता जी की हार्दिक इच्छा साकार होकर पूर्ण होगी, वहीं हमें जनता की सेवा का सन्तोष प्राप्त हो सकेगा।

इसी भावाभिव्यक्ति से इस पुस्तक 'क्षीर-भवानी' (मॉज्य राज्ञा भगवती) को जनता के समक्ष प्रस्तुत किया जा रहा है। इससे मैं एक अलौकिक आनन्द का अनुभव कर रहा हूं। मां राज्ञा भगवती अति स्नेहमयी एवं सुधामयी हैं। शान्तिदायिनी तथा सौभाग्यदायिनी भी वही हैं। वही पराम्बा भगवती हमारी इस प्रबुद्ध तथा शांति-प्रिय कश्मीरी पण्डित जनता का उद्धार कर सकती है क्योंकि वह अपार करुणा-सागर की मूर्ति हैं।

इस नवीन संस्करण का पूर्ण रूप से अवलोकन कर इसे बड़ा आकार दिया गया है। कुछ कश्मीरी भजन (लीला-काव्य) जिनसे भक्तजन पुष्प-अर्घ्य प्रदान कर प्रायः मां भगवती महाराज्ञा की आराधना करते हैं इस पुस्तक में सम्मिलित किए गई हैं। ऐसा भक्त-जनों के विशेष आग्रह से किया गया हिन्दी भाषा में सुयोग्य अनुवाद तथा परमार्थ के लिए मैं श्री जानकीनाथ कौल 'कमल' को हार्दिक धन्यवाद देता हूं।

मैं उन सब महानुभावों के प्रति अपनी भी कृतज्ञता प्रकट करना चाहता हूं जिन्होंने अपना अमूल्य समय देकर इस संस्करण को प्रकाशित करने में सहयोग दिया।

आशा है जनता इस पुस्तक का हार्दिक स्वागत करेगी।

दिल्ली-110095 —लोकेश कौल
जनवरी-1993

प्रस्तावना

महाराज्ञी माहात्म्य का आद्य स्रोत—

कश्मीर मण्डल में भृंगीश-संहिता अनुसंधित्सुवर्ग तथा इतिहास-प्रिय विद्वानों में बहुचर्चित तो है पर किसी को समूचे रूप में इसकी पाण्डुलिपि दृष्टिगोचर हुई हो ऐसा सुना नहीं। जनमत से ही जानने में आया है कि प्राचीन काल में यहां के भृङ्ग परगना के भृङ्गीश ऋषि ने इसविशालकाय पुस्तक में कश्मीर (जहां की तिल मात्र भूमि तक तीर्थों की पावनता से विभूषित है और जहां भारत के सब तीर्थों का संकेत[1] मिलता है), के पूर्व काल से वर्तमान सब तीर्थों के माहात्म्यों का यथायोग्य वर्णन किया था। परन्तु अप्राप्य होने पर भी बिखरे रूप में इस माहात्म्य-ग्रंथ के कई पृष्ठ कश्मीरी पण्डित घरों में समय-समय पर उपलब्ध हुए हैं। डा० ब्हूलर को पूर्व शताब्दी के अन्तिम चतुर्थाश में शारदा-लिपि संस्कृत में लिखे सोलह तीर्थ स्थानों के माहात्म्यों की पाण्डुलिपि-पृष्ठ उपलब्ध हुए थे। तत्पश्चात् एम० ए० स्टीन ने और अधिक माहात्म्यों को प्राप्त कर उनकी सूची

---

1. तिलांशोऽपि न यत्रास्ति पृथ्व्यास्तीर्थैः बहिष्कृतः।

—'जिस (कश्मीर) की धरती का तिल के बराबर अंश भी तीर्थ की पावनता से रहित नहीं है। (राजतरंगिणी 1-138)

वनाई। उनका मत है कि संभवतः अन्य उपलब्ध कई माहात्म्य उत्तर काल में भी लिखे गए हों।

महाराज्ञी त्रिपुरसुन्दरी

अस्तु, राज्ञीप्रादुर्भाव (और राज्ञी माहात्म्य) इसी भृङ्गीश संहिता का एक पृष्ठ माना जाता है। इस माहात्म्य के अनुसार महाराज्ञी भगवती को त्रिपुरसुन्दरी कहते हैं। कश्मीर के विशेष शावत ग्रंथों तथा शक्ति-सम्बन्धी अन्य शास्त्रों से प्रकट है कि देवी अपने त्रयात्मक रूप से विश्व भर में व्याप्त है।[2] जीवन के आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक व्यापार में भी यह त्रयात्मकता मौजूद है। तन्त्र के अनुसार भी तीनों गुणों का समन्वय भैरव-रूप में है। अतः कामदेव के अर्धाङ्क से सुशोभित इस त्रयात्मकता की अधष्ठात्री शक्ति महाराज्ञी को त्रिपुरसुन्दरी के नाम से अभिहित किया है। भगवती के तीन रूप परा, परापरा और अपरा, भू भुवः और स्वः (लोको में), सत्व-रज-तम एवं जाग्रत्-स्वप्न-सुबुप्ति अवस्थाओं से व्यक्त होते है। राज्ञीप्रादुर्भाव का शुभारम्भ महामाया जगन्माता महाराज्ञी के इसी प्रकार के वर्णन से होता है।[3] त्रिगुणमयी रूप धारण करके भी देवी तरुण की तरह निर्लेप और स्वतन्त्र है।

---

2. देवानां त्रितयं, त्रयी हुतभुजां, शक्तित्रयं, त्रिस्वरा-
स्त्रैलोक्यं, त्रिपदी, त्रिपुष्करमथो त्रिब्रह्म, वर्णास्त्रयः।
यत्किञ्चिज्जगीत त्रिधा नियमितं वस्तु त्रिवर्गात्मक
तर्त्सवं त्रिपुरेति नाम भगवत्यन्वेति ते तत्त्वतः॥
—पंचश्स्तवी, I-16

3. या मूर्तिस्त्रिपुरा देव्या द्वितीया तरुणाभिधा।
महाराज्ञी प्रादुर्भाव, I-1

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

रावण ब्रह्मा जी के मानस पुत्र पुलस्त्य का बेटा था। वह जन्म से ऋषि-सन्तान और ब्राह्मण था। महापण्डित और शिवभक्त होकर भी तामसिक राक्षसी प्रवृत्ति ने उसे घेरे रखा था। वह महाराज्ञी देवी की अर्चना-पूजा तामसी अर्थात् काली रूप में करता था। अतः श्री लंका में देवी को 'श्यामा' नाम से अभिहित किया गया। रावण का अन्तःकरण तमोगुण से इतना आच्छादित था कि देवी के प्रसाद से भी निर्मल न हो सका। इसका विशेष कारण उसका अपना गूढ़ अभिमान ही था। फलस्वरूप देवी श्यामा ने रावण के लंका देश को छोड़कर सतीसर (कश्मीर) आने का शुभ संकल्प किया।[4] उसने अपने शुद्ध-सत्व रूप को धारण कर तामसी रूप राक्षणों के लिए पीछे छोड़ा। इससे देवी यहां आकर दूध, क्षीर तथा मिष्टान-प्रिय रही, और क्षीर भवानी के नाम से पूजी जाने लगी।

कश्मीर भूमि में, क्षीर भवानी के सम्बन्ध में और भी पवित्र कुण्ड और मंदिर हैं जिनमें भक्तजन जाकर देवी जी की पूजा-अर्चना करते हैं। कहा जाता है कि हनुमान के अंगरक्षण में और 360 नागों को साथ लेकर कश्मीर आते समय यह देवी जी के विश्राम-स्थल रहे हैं—

1. मंज़गोम—कुलगाम से थोड़ी दूर पर और कपाल मोचन के समीप यहां सुन्दर और पवित्र कुण्ड है।

---

4. यदा तदपराधैः सा चोद्विग्ना तद्गृहहस्थिता।
सतीदेशं समायातुं कृतवता सुनिश्चला॥
तदायाया सतीदेशं रामराज्यप्रदायिनी।
महाराज्ञीति विक्षाता भुवनेशमुपाश्रिता॥
महाराज्ञी प्रादुर्भाव 3, 33

2. खनवरञ्ज—यह तीर्थ दिवसर करेवा पर कुलगाम के समीप ही है। यहां जल की कमी है।
3. कुलवागीश्वरी—कुलगाम (ज़िला अनन्तनाग) में देवी का पवित्र कुण्ड और मन्दिर है।
4. लोकुट्यपोर—मट्टन (मार्तण्ड) के पूर्व में ऐशमुकाम पर्वत के समीप ही यह तीर्थ है।
5. रायथन—बडगाम तहसील में यहां देवी का पवित्र कुण्ड और मन्दिर है।
6. बादीपुर—एक पवित्र तीर्थ।
7. पोखरीबल—हारी पर्वत के उत्तर-पश्चिमीय दामन में यहां पवित्र कुण्ड और भव्य मंदिर है।
8. अनन्तनाग—नागबलकी समीपवर्ती में मुसलमान जियादत के पास ही राज्ञा भगवती का कुण्ड और मंदिर है।

महाराज्ञी की स्थापना के रूप में कश्मीर के और दूसरे स्थानों पर भी कुण्ड तथा मंदिर है। अतः ज्ञात होता है कि देवी जी ने इन सब स्थानों को पवित्रित किया है। अन्य स्थान इस प्रकार हैं—बाण्डीपोर, कोटितीर्थ (बारामुला), चण्डीग्राम और टक्कर (हन्दवारा)। इस प्रकार वहां प्रकृति की विभूति संपन्न बहुत स्थानों को पवित्र कर महाराज्ञा भगवती ने फिर शारदा जी से लौटकर तुलमुल में अपना स्थान चुन लिया।

क्षीर भवानी का महत्व और रंग बदलता जल-कुण्ड

महामाया महाराज्ञी क्षीरभवानी कश्मीर के हिन्दू कुटुम्बों की प्रधान कुलदेवियों में से एक है। इन्हें इष्टदेवी भी कहते हैं। वास्तव

में महाराज्ञी त्रिपुरा अर्थात् तीन पुरों की सम्राज्ञी है और महाकाली, महालक्ष्मी तथा महासरस्वती का समन्वित प्रतीक है। कश्मीरी पण्डित जनता देवी को 'राजर्यञ्ञ रानिञ्जअर' के नाम से बड़ी श्रद्धा, आस्था और पवित्रता के साथ पूजते हैं। वे तुलमूल ग्राम में प्रतिष्ठित इनके दरबार में यथा समय जाकर इन्हें विनय, भक्ति और वात्सल्य के फूल चढ़ाकर सन्तुष्ट होते हैं। विशेषकर महाराज्ञी के पवित्र कुण्ड के जल के बदलते रंग में कभी अपनी मानसिक पवित्रता का परिचय पाते हैं; और कभी खिन्न होकर यज्ञ-हवन रचाकर प्रायश्चित कर लेते हैं। अब यह पवित्र स्थान देश-विदेश से आये श्रद्धालुजनों तथा पर्यटकों का आकर्षणस्थल बना है। यहां का बाह्य वातावरण तथा आंतरिक मनस्तुष्टि किस सहृदय जन पर अपना आनन्द प्रभाव नहीं डालते। इस बात का परिचय इस रम्यस्थली में कुछ समय तक ध्यान-पूजन करने से ही मिल सकता है।

महाराज्ञीस्तव

प्रसिद्ध है कि एक भक्तजन कृष्ण पण्डित ने तुलमूल ग्राम के इस सुन्दर स्थान में देवी क्षीरभवानी की प्रतिष्ठा की थी। उन्हें देवी के ध्यान का एक श्लोक[5] इसी दिव्य कुण्ड से मिला था। इस भक्त कवि ने इस ध्यान श्लोक के एक-एक अक्षर पर एक-एक श्लोक लिखकर भगवती को श्रद्धांजलि अर्पित की थी। यही 59 श्लोकों की स्तुति

---

5. वा द्वादशार्कपरिमण्डित मूर्तिरेका
सिंहासनस्थितमतीमुरगैवृतां च।
देवी [illegible] प्रसन्नां
तां नौमि भर्गवपुषीं परमार्थराज्ञीम् ॥

अब महाराज्ञीस्तव[6] से प्रसिद्ध है। क्षीरभवानी (तूलमूल) जाकर भक्त लोग बड़ी श्रद्धा से आरती करके इस पवित्र स्तव का पाठ करते है।

मूल लेखक का परिचय

बैकुण्ठवासी श्री संसारचन्द कौल के कश्मीर देश तथा इसके सुन्दर वातावरण संबंधी अपनी प्रणीत पुस्तकों की अंग्रेजी भाषा में लिखित एक कड़ी **'क्षीरभवानी स्प्रिङ्ग'**[7] नाम की पुस्तिका है। इसका प्रथम संस्करण 15 अगस्त 1954 को छपा था। तत्पश्चात् इसके और तीन संस्करण अब तक निकल चुके हैं। दूसरे संस्करण में 'अमरनाथ गुफा'[8] भी छपवाई गई थी। तीसरे संस्करण में इसे अलग किया गया। चौथा संस्करण अगस्त 1981 में छपा। लेखक महोदय के सुपुत्र श्री लोकेश कौल ने अपनी प्रस्तावना में लिखा है कि इस संस्करण में समयानुसार कुछ परिवर्तन किए गए हैं।

---

6. यह स्तव 'या द्वादर्शाकपरिमण्डितमूर्तिरेका' इस पंक्ति से आरम्भ होता है। रैणावारी के प्रसिद्ध विद्वान् पण्डित केशव भट ज्योतिषी ने इसे 1927 ई० में निर्णयसागर प्रेस, कोलभाट्ट लेन, बम्बई से अपने संकलन 'देवीपूजा' नाम की पुस्तिका में छपवाया था।
7. Kshirbhavani Spring—Samsar Chand Kaul p. 23 Pub. Utpal Publications, Rainawari, Srinagar. (Now Dilshad Garden, Delhi).
8. Mysterious cave of Amarnath—Samsar Chand Kaul; Utpal Publications, Srinagar. (Now Dilshad Garden, Delhi).

पण्डित संसारचन्द कौल टिण्डेल बिस्को[9] द्वारा श्रीनगर में स्थापित मिशन स्कूल के मान्य अध्यापक रहे थे। अनुशासनबद्ध जीवन से प्राप्त अपनी योग्यता के फलस्वरूप श्री कौल शान्त हृदय तथा सौम्य पादरी साहिब के स्नेह-पात्र बन चुके थे। उन्हें संसार भर की प्रगतिशील सभाओं का सदस्य[10] बनने का श्रेय प्राप्त हुआ था। उन्हें 'पक्षी-निरीक्षक'[11] उपाधि से प्रसिद्धि मिली थी। इसके अतिरिक्त वे कश्मीर शैव-दर्शन के प्रति बहुत श्रद्धा रखते थे। और इस लेखक के सुनने में यह बात आई कि वे उत्पलदेव की शिव-स्तोत्रावली का पाठ घर में नित्य प्रति किया करते और घर के प्रिय सदस्यों में इस सुन्दरतम ग्रन्थ के पठन-पाठन की प्रेरणा देते थे। देश को ऐसे सौम्य व्यक्ति पर गर्व है। 'क्षीरभवानी' इन्हीं की पुस्तिका का हिन्दी में अनुवाद है।

हिन्दी अनुवाद की आवश्यकता

चूंकि कश्मीर भारत का अहिन्दी प्रान्त घोषित होने के बाद भी यहां की जनता हिन्दी लिखने-पढ़ने में दिलचस्पी लेती रही है।

---

9. Tyndale Biscoe (1836-1949 A.D.) was known as maker of Modern Kashmir. (Principal Mission High School, Fateh Kadal, Srinagar, Kashmir).

10. Member, Society of World Watchers, England. Member, Royal Canadian Geographical Society. Member, National Geographic Society, Washingtion, D.C. Member, Board of Studies in Geography (University of Jammu & Kashmir).

11. 'World-Watcher'.

प्रकाशक महोदय ने अंग्रेजी भाषा में लिखी इन छोटी पुस्तिकाओं की कड़ी का हिन्दी भाषा में अनुवाद छपाने का निश्चय किया। भारत की राज्यभाषा होने के नाते भी हिन्दी में अनुवाद होना समीचीन है।

इससे सर्वसाधारण जन भी इस पवित्र तीर्थ के महात्म्य तथा शान्तिवर्धक वातावरण को जानकर पारमार्थिक तथा ऐहिक लाभ का भागी बन सकेगा। इस अनुवाद में मूल विषयों का संशोधन तथा वर्तमान स्थिति तक संवर्धन करने का प्रयत्न किया है। इसके अतिरिक्त परिशिष्ट भाग में प्रस्थान-त्रयी के भाष्यकार आद्य शंकराचार्य द्वारा प्रणीत 'गौरी-स्तुति' तथा और भी सर्वजनचर्चित देवी के श्लोक सटीक दिए गए हैं। संस्कृत श्लोकों का हिन्दी में अनुवाद इन पंक्तियों के लेखक ने ही किया है। इनका पाठ महाराज्ञी के दरबार में आरती के समय अवश्य होता है। आशा है इससे भक्तजनों को सुविधा मिलेगी और हमें भी युवा जनता के प्रति ऋण चुकाने का अवसर प्राप्त होगा।

जानकीनाथ कौल
सम्पादक—संस्कृति स्तम्भ
श्री रामकृष्ण आश्रम,
श्रीनगर (कश्मीर)

पंजाब विश्वविद्यालय
परिसर, चण्डीगढ़
फरवरी 15, 1988

क्षीरभवानी महाराज्ञी

पृष्ठभूमि

जिस प्रकार का घनिष्ठ सम्बन्ध पिण्डाण्ड का ब्रह्माण्ड से है, वैसा ही घनिष्ठ सम्बन्ध काश्मीर का समस्त भारतवर्ष से है। हिन्दू-धर्म के जितने तीर्थ हैं, जितने देवी-देवता हैं और जितने यात्रा-स्थल हैं वे सब-के-सब काश्मीर में येन केन प्रकारेण अविकलपरूप से उपस्थित हैं। काश्मीर का प्राचीनतम ऐतिहासिक ग्रंथ 'नीलमत-पुराण'[1] इस तथ्य का साक्षी है और जनमत से भी यह बात अवश्य सिद्ध है। यद्यपि कश्मीर की प्राकृतिक और अलौकिक रम्यस्थली विशेषकर शिव-शक्ति का विहार-स्थल रहा है तथापि यहां सभी देवी-देवताओं के मन्दिर, गुफाएं, कुण्ड और नदी-नद हैं और वे सब यथासमय नित्य और नैमित्तिक रूप से माने और पूजे जाते हैं। यहां के चपे-चपे में देवताओं का निवास है और कदम-कदम पर प्रकृति के निखार के दृश्य देखने को मिलते हैं। भगवती पार्वती ने भगवान् शिव के स्वरूप का विकास यहीं से आरम्भ कर यहीं पूर्णता को पहुंचाया है। यहीं पर वह अनुग्रह रूप से बसी है—'शैवीमुखमिहोच्यते'[2]। काश्मीर

---

1. पृथिव्यां यानि तीर्थानि तानि तत्र नराधिप।
   ऋष्याश्रमसुसंबाधं शीतातप सुखं शुभम्॥ नी०पुरा०-17
2. भगवती शक्ति भगवान् शिव को प्राप्त करने का मुख अर्थात् द्वार है।

को 'शारदा-पीठ' के नाम से अब भी जाना जाता है। इसे शारदा देश भी कहते हैं। काश्मीर के उत्तर-पश्चिम में 'शारदा' नाम का एक पवित्र स्थान है। अब यह स्थान पाकिस्तान शासित काश्मीर के टुकड़े में है जिसे आज़ाद-काश्मीर नाम रखा है। प्राचीन काल में यह विद्या का बड़ा केन्द्र था और कहते हैं कि आद्य शंकराचार्य जब काश्मीर आये थे तो यहां के शारदा-मठ से ही 'जगद्गुरु' की सर्वोत्तम उपाधि से सम्मानित किए गए थे। काश्मीर देश का विस्तार ही कृष्णगंगा के समीप शारदा के पवित्र स्थान से लेकर बानिहाल किश्तवार तक के केसर-उपजाऊ तटवर्ती देशों तक माना गया है। तन्त्रों में कहा है—

शारदामठमारभ्य कुंकुमादितटान्तकः ।
तावत्काश्मीरदेशः स्यात् पंचाशद्योजनात्मकः[1] ॥

कहते हैं यह सारा देश त्रिकोटी देवी-देवताओं का पवित्र निवास है।

काश्मीर एक प्रसिद्ध शक्तिपीठ है। यह इकावन शक्ति पीठों में एक गिना जाता है। दक्षयज्ञ के बाद विष्णु के चक्र से सती का अंग-प्रत्यंग जहां-जहां गिरा था, वे सब स्थान देवी पीठ के नाम से विख्यात हुए। इन सब स्थानों की पूज्यता और पवित्रता के सम्बन्ध में देवी भागवत[2] आदि पुराणों तथा तन्त्रचूडामणि में संकेत मिलता

---

1. पचास योजन का विस्तार। एक योजन नौ मील और एक मील 8/5 किलोमीटर के हिसाब से यह लगभग 700 किलोमीटर आता है।
2. 108 सिद्धपीठों में काश्मीर प्रदेश में 'मेघा' वर्णित है।
देवी भागवत स०अ०, 3,7 पृष्ठ

है। काश्मीर में देवी के कण्ठ देश का अङ्ग तथा अङ्गभूषण गिरे थे। यहां की शक्ति का नाम महामाया और भैरव का नाम त्रिसन्धेश्वर तन्त्रचूडामणि में वर्णित है। अतः काश्मीर एक शक्तिपीठ है यह बात सिद्ध है और इसमें कोई सन्देह नहीं है कि यहां देवियों के अनेक प्राचीन और अर्वाचीन मन्दिर विद्यमान हैं। अर्वाचीन मन्दिरों तथा सामूहिक पूजा स्थानों में भी कई देवस्थान बहुत अच्छे और प्रसिद्ध हैं।

योगमाया का मन्दिर और रंग बदलता कुण्ड

काश्मीर की राजधानी श्रीनगर से कोई चौबीस किलोमीटर उत्तर-पश्चिम में गांधरबल की एक रम्यस्थली पर्यटकों का विशेष स्थान है। इसी के समीप लगभग चार किलोमीटर दूर तूलमूल नाम का एक गांव है। यह गांव और इसके आस-पास का इलाका प्रकृति के अनुपम सौन्दर्य का एक नमूना है। मौन भाषण करते पहाड़, कल-कल करते झरनें, सनसनाते वृक्ष, मन्द ओर द्रुत गति से बहते नदी-नाले, धान के लहलहाते खेत, अमृत जैसे रस पिलाने वाले मेवों के बाग और रंगा-रंग फूलों की छोटी-बड़ी क्यारियां यहां की विशेषता है। पक्षियों की मनमोहक बोलियां स्वर्ग-सुख को भी मात करती हैं। यहां की वन-स्थली मानो प्रतिस्पर्धित स्वर्गस्थली का प्रतिरूप है। यही तुलमुल गांव का परिचय है। यहां काश्मीर का प्रसिद्ध क्षीर-भवानी अर्थात् योगमाया का मन्दिर है। चारों ओर जल है, वीच में एक टापू सा है। इस छोटे से टापू में एक सुन्दर कुण्ड (चश्मा) हैं जिसके बीच संगमरमर का मन्दिर है। वहीं भगवती महाराज्ञी अपने भैरव वामदेव के साथ विराजती हैं। ज्येष्ठ शुक्ला अष्टमी को यहां बड़ा मेला लगता है और उस अवसर पर बहुत हवन-पूजन होता हैं। दूर-दूर के इलाकों से यहां भक्तजन आकर बड़ी श्रद्धा और प्रेम से भजन-पूजन

करते हैं। प्राचीन आर्य-संस्कृति यहां जीती जागती दिखाई देती है। बड़े-बड़े सौम्यवर्ण तिलकधारी पण्डित लोग शुद्ध वेद मंत्रों से अर्चना और ध्यान में तत्पर दीखते हैं। समूचे भारतवर्ष के प्रांतों से विद्वान्, पण्डित, योगी, भक्त, साधु, सन्यासी यहां भगवती के दर्शन से गद्-गद् होते हैं। हर प्रकार के गिने-माने स्त्री-पुरुष यहां आकर लाभान्वित अवश्य होते हैं और शांतिपूर्ण वातावरण में पुनरागमनाय चले जाते हैं। वर्ष भर विशेषकर प्रति शुक्लअष्टमी को यहां भक्तों की भीड़ लगी रहती है और सदा भजन-कीर्तन, वेद-पाठ और श्रुति-विचार होते रहते हैं जिससे जन कल्याण कामनाएं फलित होती हैं।

काश्मीरियों में क्षीरभवानी को महाराज्ञा[1] के नाम से जाना जाता है। काश्मीरी भाषा में हिन्दू व मुसलमान, महाराज्ञा को 'राजर्यञ्ञ रानिब्रॉर' के नाम से अभिहित करते आये हैं और कुण्ड के स्थान को 'नागबल'। महाराज्ञा के मण्डप के चारों ओर जो पवित्र कुण्ड है वह छः कोणों वाला है। उसका आकार शारदा लिपि के ओंकार (एँ) का है और विशेषता यह है कि उसका रंग बदलता है —गुलाबी, नीला, बादामी, रक्त और काला आदि। काश्मीर के जन-साधारण की मान्यता है कि इसी पर देश के शुभाशुभ का विचार होता है। गुलाबी आदि मनोहर रंग सात्त्विक तथा शांत भाव के द्योतक हैं। रक्त आदि दूसरे रंगों से राजसिक व्यवहारों का पता चलता है और काला रंग तमोगुणी वृत्तियों अर्थात् आध्यात्मिक आधिदैविक और आदिभौतिक प्रकोपों की सूचना देते हैं। यह टापू विशाल चिनार वृक्षों से भरा है। शीतल स्वच्छ छाया, पास की पर्वत श्रृंखला और सिंधु नदी की शाखा उपशाखा में बहते नदी नाले इस स्थल को इतना मनोहर बना देते हैं कि देवराज

---

1. महाराज्ञी को महाराज्ञा भी कहते हैं।

इन्द्र की अमरावती का कुछ-कुछ भास होने लगता है। इस रहस्यात्मक कुण्ड के पारमार्थिक रहस्य को वे ही जन जानते हैं जिन पर दयामयी भगवती महाराज्ञा का अनुग्रह प्रकट हुआ हो।

क्षीरभवानी

महाराज्ञा को क्षीरभवानी नाम से इस कारण अभिहित करते होंगे क्योंकि यह देवी सात्विक गुण विशिष्टा है। भगवती माता दुर्गा को इस रूप में सात्विक भोजन और सुन्दर वसन ही प्रिय हैं। यह क्षीर-मिष्टान्न भोजी है। भक्त-जन हो या साधारण-जन, जब देवी के दर्शनार्थ कांक्षा उत्पन्न होती है तो प्रस्थान के पूर्व दिवस ही शारीरिक तथा मानसिक शुद्धि का अवलम्बन करते हैं दूसरे दिन नहा-धोकर और वस्त्र बदलकर ही शुद्ध विचार मन में रखकर वहां जाते हैं। शुभ फल पाते हैं। स्थान का वायुमंडल आकर्षक, मनमोहक तथा परमार्थ-स्वरूप-बोधक है। जो भी वहां जाता है विश्रांति के क्षणों को अनुभव कर कृतकृत्य हो जाता है।

बाह्य-वातावरण

हिमालय की पश्चिमी शृंखला में ही काश्मीर की वादी स्थित है। पर्वतों की श्वेत चोटियों से बर्फ पिगल-पिगल कर नदियों में निर्मल जल बनकर वहता है या पृथ्वी में जज़्ब होकर कुण्ड (चश्मा) के जल प्रवाह में स्थान-स्थान पर प्रकट होता है। इन चश्मों को 'नाग' कहते हैं। काश्मीर में कई स्थान 'नाग' नाम से प्रसिद्ध हैं जैसे नीलनाग, शेषनाग, वासुकिनाग, विचारनाग, वेरनाग, चण्डीनाग, अनन्तनाग, आदि। 'नाग' सर्प को कहते हैं। नीलमत-पुराण और कल्हणकृत राजतरंगिणी से हमें पता चलता है कि काश्मीर में

प्राचीनकाल में 'नाग' लोग बसते थे। यहां के शासक नीलनाग के नाम पर ही नीलमत-पुराण बना था। यह नाग विशेष देवी-देवताओं को समर्पित हैं। काश्मीर की जन्त्री (पंचाङ्ग) में विशेष दिवस रखे गए हैं जब इन नागों की पुण्य स्मृति में पूजा हवन आदि किये जाते हैं। मेले मनाये जाते हैं।

तूलमुल गांव और आसपास की भूमि अधिकतर दलदल है। यहां के रहने वाले लोग कहते हैं कि भूमि में कहीं भी सुराख खोद लो तो मछली निकलती है। यहां कई चश्मे हैं और अमरनाथ तथा गंगवल की बर्फ की सरकती चट्टानों से बहती हुई सिन्धु नदी की उपशाखाओं से बने बहुत से टापू हैं। वनस्पति की बहुत वृद्धि है। गांव के बाहर धान के खेत हैं। इन खेतों की मुण्डेरों पर एक प्रकार की छोटी-छोटी वनस्पति उगती है जिसे 'व्यन' कहते हैं। इसकी सुगन्ध बहुत मनमोहक और शान्तिप्रद है। फूल के रूप से कुण्ड में भगवती की पूजा 'व्यन पोम' से की जाती है। गांव के लोग इसे अपने खेतों के मुण्डेरों से काटकर लाते हैं और यात्रियों को बेचकर अधिक धन कमाते हैं। इस फूल के अतिरिक्त यहां और कई प्रकार की पुष्प जातियां उगती हैं। गुलाब, जाफुर और पम्पोश (कमल) फूल भी भगवती को बहुत प्यारे हैं।

एक स्वच्छ जल की नहर जो गांव के पूर्व के चश्मों से बहती है यहां पुल के नीचे से बहकर सिंधु नदी की शाख से मिलती है। इसे **गंगखई** कहते हैं। गांव के टापू अधिकतर सफेदे और सरवत के वृक्षों से आच्छादित हैं। देवस्थान के विशेष टापू पर इनके अतिरिक्त चिनार, तूत, एल्म (जंगली वृक्ष) उगते हैं। वनस्पति और जल अधिक होने के कारण इस स्थान पर जुलाई-अगस्त में मच्छरों तथा मक्खियों की भरमार रहती है। परन्तु पक्षियों की बोली क्या सुन्दर

राग अलापती हैं, इसे सुनते ही बनता है। गर्मियों में यहां के पक्षी— पीले परों वाला पक्षी (Golden Oriole), सारिका (Thrush), वन कबूतर (Ring-dove), मखीमार (Flycatcher) और बुलबुल अपनी अपनी सुन्दर बोलियों, परों की सजावट और रंगों के कारण अपनी विशेषता रखते हैं। सर्दियों में वन-मुर्ग (Wild Tone), जंगली बतख (Mallard), गड़वाल (Gadwall), बतख (Widgeom), छोटा बतख (Teal), चिड़िया (Paddy Bird), जल-पक्षी विशेष (Coot) समीपवर्ती आंचार झील और इर्द-गिर्द के दलदल से भरे इलाके में मिलते हैं।

आंचार झील

आंचार का झील लगभग 12 वर्ग किलोमीटर के विस्तार में फैला है। यहां झील डल की अपेक्षा बड़े सुन्दर चलते-फिरते उद्यान (Floating gardens) हैं। भौगोलिक विशेषज्ञों की मान्यता है कि यह झील पूर्वकाल में लार और गान्धरबल की समीपवर्ती पर्वत-शृंखला के दामन तक फैला हुआ होगा। बाढ़ों के कारण उबरी हुई ज़मीन से सिन्धु नदी के जल और वर्षा के बहाव के द्वारा सैकड़ों वर्षों से मिट्टी जम गई और झील की परिधि कम और कम होती गई। छोटे-छोटे डेल्टा बन गए। लगभग एक सौ वर्ष पूर्व सिन्धु नदी अपना रुख बदल कर **गाडुर** नामक गांव को बहा कर झील में प्रवेश कर गई। इसकी एक शाखा शादीपुर के समीप वितस्ता से मिलती है। झील डल का पानी दो नहरों के द्वारा आंचार झील में बहता था। अब एक ही नाला **नालबल** नाम का **हारी पर्वत** के अंतर में **अमदा कदल** के रास्ते से बहता था। परन्तु यह एक विशाल योजना के अंतर्गत बन्द हो गया है। आंचार झील के दक्षिणी भाग में **खुशाल सर** नाम का एक और झील है जिसमें जुलाई-अगस्त के

महीनों में सुन्दरतम कमल के फूलों का दृश्य देखने को मिलता है। यहां तीतर-पक्षी के जैसे दुम वाला और उज्ज्वल परों वाला जाकना (Jacana) पक्षी तथा काले रंग की चिड़िया बहुत ही लुभावने उड़ते चहचहाते नजर आते हैं। इस झील में कमल नाल की उपज से नदरू सब्जी तथा पम्बछ मेवे प्राप्त होते हैं। यहां मछलियों का व्यापार भी होता है और पशुओं के लिए पशु भोजन या चारा भी प्राप्त होता है। आंचार झील के पूर्वी भाग में दो प्रभावशाली चश्मे (नाग) हैं। एक **अमरेश्वर** नाम से जाना जाता है। यह **अम्बुरहेर** के स्थान पर है। श्री एम०ए० स्टीन (M.A. Stein) का कहना है कि यह पुराने समय में एक बड़ा यात्रा-स्थल था। दूसरा चश्मा **बियहोम** नाम वाले गांव में है। इसका जल अपूर्व पाचन-शक्ति के लिए प्रसिद्ध है।

यात्रा

क्षीरभवानी तीर्थ की यात्रा करने वाले लोग आजकल मोटर और बस के द्वारा ही वहां जाते हैं। परन्तु जब ऐसी सुविधा नहीं थी तब यात्री लोग वहां पैदल चल कर ही जाते थे या नाव-डूंगे का प्रयोग करते थे। परन्तु धर्म-प्रिय यात्री पैदल जाना ही अधिक पसंद करते थे। श्रीनगर से यह लोग सोवुर घाट या **ग्राज कदल** तक पैदल जाते थे। वहां से साधारण नौकाओं द्वारा आंचार झील को पार कर **गाडुर** नाम स्थान पर उतरते थे। वहां से धान के खेतों में से चलकर कुल चार या पांच घण्टों में तूलमुल पहुंचते थे। भक्त-जन प्रायः नंगे पैर ही चलना उत्तम समझते थे। कोई-कोई घास का पुला भी प्रयोग में लाता था।

कई समृद्ध गृहस्थ अपना कुटुम्ब लेकर वितस्ता (जेहलम) नदी से डूंगा या हाउस बोट (House-boat) में बैठकर श्रीनगर से

प्रस्थान करते थे। नदी के रास्ते में एक तीर्थस्थान **शादीपुर** है। यहां वितस्ता और सिन्धु का संगम है। इस तीर्थ को **'प्रयाग'** कहते हैं। नदियों के इस संगम पर एक चिनार का वृक्ष खड़ा है। यह हिन्दुओं का पवित्र स्थान है। हर तेरह वर्ष के बाद यहां कुंभ का मेला लगता है जब पितरों का श्राद्ध तर्पण आदि किया जाता है। काश्मीर के हिन्दू लोग अपने मृतकों की अस्थियां हरमुख पर्वत के समीप हर-मुकुट गंगा में समर्पित करते रहे हैं। परन्तु जब 1947 में काश्मीर पर कबाइली हमला हुआ तब से वहां बहुत कम लोग जाते हैं। अब शादीपुर के **प्रयाग तीर्थ** पर ही अधिकतर इन अस्थियों का समर्पण किया जाता है या हरिद्वार (हर-द्वार) के पुण्यतीर्थ में जाकर प्रवाह करते हैं। शादीपुर से डूंगा सि धु नहर के सुरम्य शाद्वल तटों के बीच चलकर वे क्षीरभवानी महाराज्ञा के दिव्य टापू तक पहुंचते हैं। इस डूंगे द्वारा यात्रा में नौ-दस घंटे लगते हैं।

श्रीनगर से क्षीरभवानी तीर्थ को जाने के लिए 23 किलो-मीटर की स्थल यात्रा में मोटर या बस द्वारा लगभग एक घंटा लगता है। परन्तु वह आनन्द कहां जो पैदल यात्रा में मिलता था। इसमें सन्देह नहीं कि समय बचता है पर तसल्ली इतनी ही है कि क्षीर-भवानी तीर्थ के दर्शन कर आये। इस रास्ते में जो तीर्थ, प्रसिद्ध पर्यटन-स्थल, पर्वत शृङ्खला, बहते झरने, सुन्दर चश्मे, धान के खेत, आंचार झील का विस्तार आदि देखने को मिलते हैं बस-मोटर द्वारा यात्रियों के भाग्य में वह कहां मिल सकते हैं। केवल जाने-आने और समय बचाने की बात ही शेष रहती है।

विचारनाग

तूलमुल का रास्ता श्रीनगर से विचारनाग होते हुए **त्यंगलबाल**

पर्वत के टीले से गुजरता हुआ कावजनार घाटी को पार कर **अम्बुरहेर** जाता है। **अम्बुरहेर** अमरेश्वर-अमरनाथ का पवित्र पुण्यस्थल है। श्रावण पूर्णिमा के दिन यात्री जन यहां आकर प्रसिद्ध अमरनाथ गुफा की यात्रा का फल पाते हैं। फिर आंचार झील को बाईं और छोड़-कर **गांधरबल** से होते हुए तूलमूल ग्राम पहुंचते हैं जहां क्षीरभवानी का पुण्य तीर्थं हैं।

श्रीनगर से आठ किलोमीटर दूर इस रास्ते पर पहले **विचारनाग** का पवित्र तीर्थस्थल आता है। कहा जाता है कि कश्मीरी पण्डितों में जो जन्त्री (पचाङ्ग) प्रचलित है उसके वार्षिक संकलन और गणित आदि पर पहले जमाने में यहां विचार किया जाता था। इसी-लिए इस तीर्थ स्थान का नाम **'विचार-नाग'** पड़ा था। विचार का अर्थ है विमर्श। विमर्श-पूर्वक ज्योतिषी महोदय नये वर्ष की जन्त्री पर यहां विचार करते थे। चैत्र मास (March) की अमावस्या को यहां अब भी बड़ा मेला लगता है। यहां एक सुन्दर कुण्ड है। इसका एक बार शोध किया गया था। इस कुण्ड के बीच में बेलन के आकार का एक पत्थर है जिसके ऊपर पत्थर का शिवलिङ्ग खड़ा है। इस कुण्ड में पूर्वोत्तर और पश्चमोत्तर कोणों से जल प्रवाह भर जाता है। गुलमर्ग से आगे अधिक ऊंचाई पर एक पर्वतीय झील है जिसका **'ऐलपथर'** प्रसिद्ध नाम है। इसी नाम पर विचारनाग के इस कुण्ड को **'ऐलपथर' कुण्ड** कहते हैं। अमावस्या पर इस मेले के दूसरे दिन काश्मीरी पण्डितों का नव-वर्ष आरम्भ होता है। इसे **'नवरेह'** कहते हैं। इसी दिन नई जन्त्री बांटी जाती है।

गान्धरबल

विचारनाग के पास ही **'सोवुर'** नाम का गांव है। श्रीनगर

की उत्तरी सीमा का कस्टम-घर (Custom Post) यहां से अब आगे धरिन्र ग्राम के पास रखा गया है क्योंकि बढ़ती आबादी और नव-निर्माण योजना के कारण शहर की सीमाएं बढ़ गई हैं। आगे चल-कर कई सुन्दर कुण्ड, बहते झरने, गर्मी में लहलहाते खेत और पर्व-तीय दृश्य मनमोहक हैं। सड़क के पश्चिम की ओर नीचे आंचार झील का विस्तार देखने में आता है। फिर **बियहोम** से होते हुए पर्यटकों का प्रसिद्ध स्थान **गान्धरबल** का छोटा कस्वा है। यहां वाजार है। इस बढ़ते हुए कस्वे में अब लड़के-लड़कियों के लिए उच्च श्रेणियों तक के स्कूल हैं तथा जन-साधारण की अन्य सुविधाएं भी सुलभ हैं। यहां **गान्धरबल विद्युत घर** (Ganderbal Power House) है जहां से श्रीनगर को अधिक विजली मिलती है। पैदल यात्री आंचार झील को नाव से पारकर गान्धरबल तट तक आ सकते हैं। प्राकृतिक सौन्दर्य की यह स्थली अभ्यागत के लिए ही नहीं अपितु सहृदय मानव के लिए स्वर्गीय वातावरण लिए हुए है। यहां के पर्वतीय दृश्य, कल-कल करते झरने, समृद्ध वनस्पति और सबसे बढ़कर सिन्धु नदी का तेज़ और स्वच्छ प्रवाह स्वर्ग लोक के वैभव को भुला देते हैं। सिन्धु नदी का दूधिया और हलका ठण्डा जल इसके सरसब्ज और शाद्वल तटों के बीच से इस प्रकार सरकता है मानो योग कुण्ड-लिनी जागकर सुषुम्ना के प्रवाह से सहस्रार की ओर तडित्वल्ली की तरह प्रचलनशील हुई हो। तटों पर विशालकाय चिनार साया प्रदान करते हैं और मनशोधक शीतल पवन का अनुभव कराते है। पास के पर्वतीय वनों से देवदारु वृक्षों की सुगन्ध से भरा मन्द पवन शान्त वातावरण को और दृढ़ बनाता है। थके मान्दे के शरीर और मन को अपार सुख मिलता है। गान्धरबल सुरम्य सिन्धु वादी का द्वार है। इस स्थान का नाम पहले **दोदरहोम** था। इसके इर्द-गिर्द कई चित्तरंजक स्थान हैं जहां दर्शक सुगमता से जाकर अपने आनन्द को और भी बढ़ा सकता है। **वाइल पुल** (Vayil Bridge) चार किलो-

मीटर की दूरी पर है। यहां हरयाले पर्वतों से उतरती सिन्धु नदी तथा वादी का उत्तम दृश्य मन पर चिरस्थाई छाप डालता है। दूसरी ओर साढे नौ किलोमीटर दूर सुरम्य और शान्त गान्धरबल से आगे मानसबल का झील है। साढे चार कि०मी० लम्बी मोड़दार सड़क धान के खेतों में से जाकर तुलमुल ग्राम में प्रवेश करती है और राजेश्वरी महाराज्ञा के दरबार की ड्योढी तक पहुंचती है।

महाराज्ञी तीर्थ का ऐतिहासिक निर्देश

पूर्वकाल में काश्मीर में भृंग परगना में कोई भृंगीश ऋषि रहते थे। कहते हैं कि इन्होंने 'भृंगीश-संहिता' नामक एक विशाल-काय ग्रन्थ लिखा था जो अब समूचे रूप में अप्राप्य है। इस पुस्तक में काश्मीर के प्राय: सभी तीर्थों का माहात्म्य तथा यात्राओं का वर्णन दिया हैं। इस पुस्तक के कुछ ही भाग कई पण्डित घरों से हस्तलिखित शारदा लिपि में कहीं-कहीं प्राप्त हुए हैं। इनमें से **अमरेश्वर माहात्म्य, वितस्ता माहात्म्य** तथा **राज्ञा प्रादुर्भाव** हैं जो अंशमात्र या पूर्ण विवरण में अब तक छप भी चुके हैं। **राज्ञा प्रादुर्भाव** के अन्तिम पटल में लिखा है कि पौराणिक काल में राजा रावण, भारत के दक्षिण में स्थित लंका नाम टापू पर राज्य करता था। लंका उस समय खुशहाल देश था। इसमें सोलह सौ नगर थे। इस टापू का वर्णन रामायण में बड़ी सुन्दरता से किया गया है।

राजा रावण पण्डित ब्राह्मण था। कहा जाता है कि रावण के पिता ऋषि पुलस्त्य काश्मीर के निवासी थे। अपने यश और सांसारिक सुख की समृद्धि के लिए रावण ने पार्वती देवी की पूजा की। भगवती श्यामा के रूप में अपनी नौ आकृतियों में उस के लिए

प्रकट हुई। रावण उन्माद रहित मन से और केवल भक्ति से कुछ काल तक भगवती की पूजा करता रहा। जब अयोध्या के राजा श्रीराम ने लंका पर आक्रमण किया तो उसकी वानर सेना के जर्नैल सुग्रीव और हनुमान ने रावण के भाई कुम्भकर्ण और बेटे मेघनाद को मार डाला। मन्दोदरी ने अपने पतिदेव राजा रावण से प्रार्थना की कि वह श्रीराम से सन्धि का प्रस्ताव करे। परन्तु रावण का क्रोध भड़क उठा और उसने भगवती श्यामा को बहुत प्रकार की बलि चढ़ाकर सन्तुष्ट करने का प्रयत्न किया ताकि उसका आशीर्वाद प्राप्त कर अपने अत्याचार को बनाए रखे। परन्तु भगवती सर्व-शक्तिमयी हैं। वह भक्तों की भावना को सुरक्षित रखने के लिए भगवती काली का रूप धारण कर अत्याचार का मर्दन करती हैं। वह रावण के कुकृत्य पर क्रोध से प्रज्वलित हुई और राजा को शाप दिया। तत्पश्चात् भगवती ने हनुमान को आदेश दिया कि वह 360 नागों सहित अपने वाहन पर आरूढ़ भगवती को सतीसर अर्थात् काश्मीर ले चले। भक्त शिरोमणि हनुमान ने आज्ञा का पालन किया। काश्मीर वादी की उत्तर दिशा में सर्वजाति-उचित एक दलदल स्थान चुना जिस से इर्द-गिर्द के गांव बोरुस, अहतुंग, लदवुन और बोकुर हैं। इन गांवों के प्राचीन नाम क्रमशः भवनीश, तुङ्गीश, लब्धवन और भागेह थे। वहां हनुमान ने देवी जी को अपने उप-देवी-देवताओं के समेत राज्याभिषेक करने का कार्य सम्पन्न किया। क्योंकि भगवती ने यहां सतोगुण रूप धारण किया और क्षीर (दूध), मिष्टान, चावल और वैष्णव पदार्थों की भेंट स्वीकार की; इसीलिए इन की स्तुति क्षीरभवानी, राज्ञी और महाराज्ञा के रूप में की जाने लगी। इस स्थान पर बसने वाले गांव का नाम 'तुलमूल्य' पड़ा। 'तूल' का अर्थ है, 'रूई' और 'मूल्य' जोड़ने से इस संयुक्त शब्द का अर्थ बनता है 'रूई जैसे मूल्य वाला'। यहां की भूमि दलदल होने के कारण रूई जैसे पतली होने के कारण ही यह नाम उपयुक्त हुआ।

इसी शब्द का अपभ्रंश 'तुलमुल' नाम है[1]। राजतरङ्गिनी के अनुवादक श्री स्टीन साहब लिखते हैं—

"तूलमूल्य निःसन्देह ही वर्तमान तुलमुल है जो मानचित्र के अनुसार 74°—48′ अक्षांश और 34°—13′ रेखांश पर स्थित हैं। यह स्थान वह दलदल भूमि है जहां वितस्ता के साथ मिलने से पहले सिन्धु नदी का प्रवाह है। तुलमुल का यह बड़ा कुण्ड महाराज्ञी का निवास स्थान है। महाराज्ञी, भगवती दुर्गा ही एक रूप है जिसे काश्मीर की ब्राह्मण जनता अनन्य भाव से पूजती है। इसी (राज्याभिषेक) दिन के अनुसार इस तीर्थ की विशेष यात्रा करते हैं।" राजतरङ्गिनी के चौथे अध्याय के 527,531 श्लोकों में स्टीन महोदय द्वार 'तूलमूलक' का नाम प्रयोग किया गया है।

राज्ञा प्रादुर्भावमें कहा है—

"सिन्धु नदी के डेल्टा का जलीय भाग, हमें प्राचीन तीर्थ तूलमूल्य के गांव में मिलता है। इस गांव को अब तुलमूल कहते हैं और मानचित्र वर यह 74°—48′ अक्षांश तथा 34°—13′ रेखांश पर स्थित है। तुलमूल्य का पुरोहित वर्ग महाराजा जयापीड (850-88 ईसा) के शासन काल में समृद्ध और प्रभावशाली वर्ग का प्रतिनिधि माना जाता है। तूलमूल्य के विशाल कुण्ड में महाराज्ञी, जो दुर्गा का एक रूप है आज भी श्रीनगर के ब्राह्मण वर्ग के द्वारा बड़ी श्रद्धा से पूजी जाती है। ऐसी धारणा है कि समय-समय पर रहस्यमथ घटनाओं

---

1. तूलवत्तुल्यतान्यत्र स्थानान्यन्यानि सुन्दरि।
   लघुभूतानि मूल्येन तस्मात्तु तूलमूल्यकम्॥
   भृंगीश संहिता 1, 34

को प्रकट करने के लिए भगवती राज्ञा कुण्ड के जल में अपने भाव बदलते रंगों से प्रकट करती है।"

इस महान् तीर्थ की स्थिति ही ऐसी है कि यात्रा में बहुत सुविधा है। अतः अधिक-से-अधिक लोग विशेष कर श्रीनगर से यहां की यात्रा करते हैं। अबुल फज़ल ने भी इस स्थान तथा यहां की दलदल भूमि का वर्णन किया है। तुलमुल के समीप चार किलोमीटर दूर दुदरहोम का ग्राम है जहां से सिन्ध का एक नाला बहता है। इसी स्थान से पहले नाव चलती थी। इस स्थान का निर्देश श्रीवर ने अपनी राजतरङ्गिनी में दुग्धाश्रम के नाम से किया है।

एक सौम्य पुरुप ने, जिसकी आयु 1948 ई० में 90 वर्ष की थी, मुझे बताया कि उसे वह समय विदित था जब 'हुर्य म्यंगनज वार' स्थान से पगडंडी पर नरकट[1] बिछा कर ही यात्री लोग उस पर चल कर टापू तक पहुंच पाते थे। कुछ समय पर्यन्त महन्त धर्मदास ने सड़क बनवाई थी। एक व्यापारी शाह राधाकृष्ण ने देवी के कुण्ड के किनारों को वारामुला से लाये पत्थर से चुनवाई करवाई। फिर महाराजा रणवीर सिंह के शासन काल में दीवान नरसिंह दयाल ने कुण्ड के उत्तर में एक विशाल धर्मशाला का निर्माण किया। कुछ समय के अनन्तर समीप भूत काल में पक्की सड़क का निर्माण हुआ। अब उस पुरानी धर्मशाला के स्थान पर धर्मार्थ ट्रस्ट ने एक सुन्दर धर्मशाला बनवाई है। यहां मांसादि का प्रयोग करना सबों के लिए निषेध है। क्षीर भवानी के टापू के आस-पास रहने वाले सभी लोग चाहे वे हिन्दू हों या मुसलमान, भगवती राज्ञा के प्रति शुद्ध भावना

---

1. नरकट एक प्रकार की घास है जो दलदल भूमि में उगती है। यह दृढ़ तथा लम्बी घास है। इससे पत्तल या चटाइयां बनाते हैं।

तथा श्रद्धा रखते हैं। जब भी वे क्षीर भवानी के टापू पर जाने का विचार करते हैं तो वे कभी भी मांसादि का सेवन करके नहीं जाते। वे स्नान शौचादि करके पवित्र वस्त्र धारण करके ही टापू पर जाने का साहस करते हैं।

एक गाथा है कि बहुत समय पूर्व भगवती राज्ञा ने पण्डित गोविन्द जू गाडरू को स्वप्न में दर्शन देकर कुछ आदेश दिया। तदनुसार वह **सोलुर** के घाट से नाव में बैठ कर आंचार झील के दलदल वाले इलाके में गया। अपने साथ उसने मिट्टी के बर्तनों में दूध भर कर लिया था। जब उसे यह कुण्ड-विशेष, भगवती के आदेशानुसार विदित हुआ, उसने सारा दूध इस स्थान पर डाल दिया और यही क्षीर-भवानी का स्थान निश्चित हुआ।

राज्ञा-कुण्ड के प्रकट होने के सम्बन्ध में एक और गाथा प्रचलित है। एक पवित्र ब्राह्मण को जिसका नाम कृष्ण पण्डित था, स्वप्न-छाया में किसी देव ने संकेत दिया कि क्षीर भवानी देवी का स्थान तुलमुल की दलदल वाली भूमि में है। स्वप्नावस्था में ही उसने देवता से पूछा कि मैं किस प्रकार उस कुण्ड को पा सकूंगा। उत्तर मिला कि शादीपुर तक नाव का प्रबन्ध करो और वहां से एक सर्प प्रकट होगा जो आपको मार्ग दिखलायेगा। जब आप कुण्ड के समीप पहुंचोगे, सर्प इस में कूद पड़ेगा। वही कुण्ड है।

कृष्ण पण्डित ने वैसा ही किया। शादीपुर पहुंच कर दलदल पर से एक सांप रेंगता दिखाई दिया। नाव उसी के पीछे लगा दी। विशेष स्थान पर जहां सांप रुक गया, कृष्ण पंडित ने लम्बी टहनियां काट कर गाढ़ दीं ताकि इस पवित्र स्थान का निर्देश हो। तत्पश्चात् सर्प अद्भुत त्रिकोणाकार में जल के अन्दर चला गया। इस आकार

से स्थान पर निशान लगाये गए। इसी प्रकार इस दिव्य तीर्थ स्थान को प्रकाश में लाया गया।

पवित्र कुण्ड के इर्द-गिर्द दलदल भूमि में मिट्टी भर दी गई जो नावों के द्वारा लाई गई। फिर कृष्ण पण्डित ने श्रीनगर से बुलाए दूसरे गण्य-मान्य पुरुषों के साथ भगवती राज्ञा की पूजा का उद्घाटन किया। कहा जाता है कि पूजा की समाप्ति पर कुण्ड के जल के ऊपर बूर्ज-पत्र का एक टुकड़ा तैरता नज़र पड़ा। कृष्ण पण्डित ने इस पत्र को उठाया और आश्चर्य से देखा कि इस पर निम्नांकित श्लोक लिखा था जिस से देवी राज्ञा के ध्यान का पता चलता है :

या द्वादशार्क परिमण्डित मूर्तिरेका
सिंहासनस्थितिमतीमुरगैर्वृतां च।
देवीमनन्यगतिरीश्वरतां प्रपन्नां
तां नौमि भर्गवपुषीं परमार्थराज्ञीम्॥

अर्थ—'मैं उस परम सत्यरूप भर्ग भगवती राज्ञी को नमस्कार करता हूं जो अद्वितीय स्वरूपा है और बारह सूर्यों के तेज से शोभायमान है; जो सिंहासनारूढ़ है; और सर्परूप भूषणों से सुसज्जित है; जो वाणी, मन आदि इन्द्रियों से अगोचर है और अपने ऐश्वर्य में स्थित है।'

विस्तार से अर्थ—इस श्लोक में भगवती के तीन रूपों का वर्णन मिलता है। एक तो काली रूप है। द्वादश सूर्यों से परिमण्डित तेज के द्वारा अमंगलकारी आसुरी प्रवृत्ति वाले दुष्ट वर्ग का नाश करती है। यह पार्वती का रुद्राणी रजोगुणी रूप है जो अपने पति रुद्र के साथ जनकल्याण का रास्ता साफ करती है। दूसरा कमला

रूप है, जो जगत के पालन और इसे ऐश्वर्य प्रदान करने में रत है। देवी काश्मीर में राज्ञा का रूप धारण कर और सिंहासनारूढ़ हो अपने पति वामदेव के साथ सात्त्विक प्रभाव से शान्तिदायिनी है। सर्प रूप में उसके साथ अनन्त शक्तियां वास करती हैं। तीसरा सरस्वती का रूप है। अभेद विद्या की दात्री अद्वितीयस्वरूपा है। तमोगुण यहां अभेद दर्शन को बतलाता है। इस रूप में विद्या, गुरु और ब्रह्म के साथ, अद्वैत ज्ञान की परिचायिका है। अतः इन तीनों रूपों को लेकर इसे त्रिपुर सुन्दरी के नाम से ही अभिहित किया गया है। यही देवी जीव-भाव की तीन अवस्थाओं क्रमशः स्वप्न, जाग्रत और सुषुप्ति का द्योतन करती है। परमार्थ पथिक योगीजन अपने दृढ़ अभ्यास और देवी के अनुग्रह से इन तीनों अवस्थाओं को लांघ कर चतुर्थ का अनुभव करते है तो तूर्यानन्द रूप स्वरूपलाभ के भागी बनते हैं। यही त्रिपुरसुन्दरी भगवती का महात्रिपुसुन्दरी रूप है। यही भगवती महाराज्ञा का ध्यान है।

कृष्ण पण्डित ज्ञानवान भक्त था। उसने इस श्लोक के एक-एक अक्षर पर एक-एक श्लोकमय पद्य देवी की प्रार्थना और नमस्कार के रूप में लिखा है। यह पद्य अब भी प्राप्त होते हैं। तत्पश्चात् यह विद्वान् भक्तप्रवर प्रति मास की शुक्ला अष्टमी को भगवती राज्ञा के कुण्ड पर दर्शन और भजन के लिए जीवन पर्यन्त जाते रहे थे। धीरे-धीरे यह तीर्थस्थान सारे काश्मीर देश में विख्यात होने लगा और स्नान-पूजा के लिए लोग इकट्ठे होने लगे। आस-पास के ग्रामीण लोगों को भी व्यवसाय मिला। वह लकड़ी, दूध और फूल लाकर यात्रियों को बेचने लगे।

प्रधान टापू में प्रवेश करने से पहले तुलमुल में दो महत्वपूर्ण स्थान और हैं। एक मीर बाबा हैदर की जियारत है। वे एक

मुसलमान दरवेश थे। दूसरा लबूशाह की समाधि। सन्त लबूशाह को रहस्यमय शक्तियां प्राप्त थीं। वह लगभग दो सौ वर्ष पहले यहां रहते थे।

कल्हण की राजतरंगिनी में इस बात की चर्चा की गई है कि राजा जयापीड ने तुलमुल के ब्राह्मणों की जमींदारी की भूमि जब्त की। राजा के अत्याचार से ऊब कर ब्राह्मण लोग एक बार मिलकर उसके पास गए। दरबानों ने उन्हें रोक दिया। हल्ला-गुल्ला मचाने पर राजा ने उनको अपने पास बुलाया। वे राजा पर टूट पड़े। एक ब्राह्मण के शापवश शाही शामियाने से सोने का एक डण्डा राजा पर गिर पड़ा। इससे उसे असाध्य घाव हुआ और परिणाम में परलोक सिधारा।

पवित्र कुण्ड

महाराज्ञा का दिव्य कुण्ड टापू के केन्द्रस्थान में है। टापू के इर्द-गिर्द सिन्धु नदी की एक नहर **गंगखाई** बहती है। कहा जाता है कि पवित्र कुण्ड के गिर्द आस-पास में 360 और कुण्ड हैं। इनमें से बहुत से अब विस्मृति में गए हैं और कुछ एक पास के जल के बहाव से मिट्टी के नीचे आ गये हैं। मुख्य कुण्ड के विख्यात होने के पूर्व भगवती की पूजा **सोलुर** में होती थी जहां पर एक चिनार का वृक्ष और एक कुण्ड आज भी विद्यमान है। इस स्थान को **'दिवत बोज'** कहते हैं। टापू के उत्तर-पूर्व में लगभग डेढ़ किलोमीटर दूर लुदवञ्न गांव में गणेश-बल है। इसे **'वुदजन'** भी कहते हैं। यहां पर गणपति को पूजा जाता है। दूसरे कुण्ड भी अब विद्यमान हैं। दक्षिण में अष्टरुद्र, दक्षिणपूर्व में चन्द्रनाग और पूर्व में मछिनाग, नागराद और गोखिञ्न नाग हैं।

क्षीरभवानी महाराज्ञा का मुख्य कुण्ड सात विषम् तरफों वाली शक्ल का हैं। पूर्व की तरफ इसके नोक को पाद (चरण) के नाम से अभिहित किया है। इसके उत्तर और दक्षिण की तरफें पश्चिम की तरफ की अपेक्षा लम्बी हैं। इस भाग को 'शेर' अर्थात् शिरोभाग कहते हैं। कुण्ड के बीच में छोटा-सा द्वीप है जिस पर कभी एक छोटा-सा मन्दिर बना होगा। इस स्थान पर एक तूत का वृक्ष भी था। अब इस स्थान पर संगमरमर का एक छोटा-सा मन्दिर बना है जिसके अन्दर राजराजेश्वरी महाराज्ञा अपने भैरव वामदेव सहित विराजमान है। यह मन्दिर काश्मीर नरेश स्वर्गीय महामना महाराजा प्रताप सिंह ने बनवाया था। वे बड़े प्रतापी तथा धर्म निरत महाराजा थे। उन्हें महाराज्ञा के प्रति अपार श्रद्धा थी। टापू की भूमि पर चौकोर पत्थरों का फर्श बिछाया गया है। कुण्ड की दीवारें पत्थरों की चुनाई में हैं। बाद में महाराजा हरिसिंह ने धर्मार्थ के द्वारा संगमरमर के मन्दिर की सुरक्षा के लिए इसके गिर्द चार स्तून खड़ा करके ऊपर एक और मन्दिर बनवाया। अब बिजली भी इस गांव में आ गई है। देवी के भक्तों तथा उपासकों द्वारा भेंट किए हुए चांदी के छत्र और झंडियां मन्दिर के अन्दर ही सजाई जाती हैं। हवन आदि के अवसर पर जो सुन्दर झंडियां भेंट की जाती हैं वे मन्दिर के पृष्ठ भाग में सजाई जाती हैं।

पूर्वजों का कथन है कि आद्य शंकराचार्य, स्वामी रामतीर्थ और स्वामी विवेकानन्द आदि संन्यासी महात्मा पवित्र कुण्ड के दर्शनार्थ इस पुण्यतीर्थ पर आकर प्रभावित हुए थे। स्वामी विवेकानन्द ने यहां आकर समाधि-सुख का अनुभव किया था। और उन्हें कुछ अनुभव भी हुए थे। इस सम्बन्ध में 'स्वामी जी के साथ एक वार्तालाप' में से कुछ अंश उद्धृत किए जाते हैं—

'स्वामी जी अमरनाथ गुफा की यात्रा करके उसी रास्ते से वापिस आये थे जिस रास्ते से साधारण यात्री श्रीनगर पहुंचते हैं। कई दिन बीतने पर ही स्वामी जी क्षीरभवानी देवी के दर्शन करने गए और वहां सात दिन तक पूजा और होम में संलग्न रहे। प्रतिदिन की पूजा में स्वामी जी एक मन (37½ किलोग्राम) क्षीर भेंट चढ़ाते थे। एक दिन पूजा करते समय उनके मन में विचार की तरंग उठी—"माता भवानी यहां अनगिनत वर्षों से विराजमान हैं। मुसलमानों ने आकर उसके मन्दिर को तोड़ डाला, फिर भी यहां के लोगों ने मन्दिर की रक्षा के लिये कोई कदम न उठाया। हाय, यदि मैं उस समय होता तो मैं यह सब चुपचाप न सह लेता।" ऐसे विचार में स्वामी जी क्रोध से भरे दुःख में डूब गए। तब उन्हें माता के यह शब्द स्पष्ट रूप से सुनाई दिए—

"मेरी इच्छा के अनुसार ही मुसलमानों ने यह मन्दिर नष्ट किया। मेरी इच्छा है कि मैं इस भग्न मन्दिर में ही वास करूं। नहीं तो क्या तत्काल ही मैं सोने का सात मंजिला मन्दिर नहीं बना सकती। मैं क्या कर सकती हूं यह तुम नहीं जानते। क्या मैं तुम्हारी रक्षा करूं या तुम मेरी?"

स्वामी जी ने फिर प्रश्नकर्ता शिष्य से कहा—

"इस दिव्य-वाणी को सुनकर मुझे कोई योजना बनाने की कल्पना नहीं हुई। मठ आदि के लिए भवन निर्माण करने का विचार मैंने त्याग दिया है। जैसे मां की इच्छा हो वैसे होगा।"

यह सुनकर शिष्य चुप हुआ और मन-ही-मन सोचने लगा, "स्वामी जी ने एक बार कहा था ना कि जो कुछ मैं देखता हूं या

सुनता हूं वह मेरे अन्तर-आत्मा की ही प्रतिध्वनि है और बाह्य कुछ है नहीं ।" स्वामी जी यही बात निर्भयतापूर्वक स्वयं कह भी डालते थे । शिष्य ने एक और प्रश्न में कहा, "महोदय ! आप कहा करते थे कि दिव्य वाणी हमारे आन्तरिक विचार और कल्पना की ही प्रतिध्वनि होती है ।"

स्वामी जी (गम्भीर स्वर में)—"आन्तरिक हो या बाह्य, यदि सचमुच अपने कानों से ऐसी निराकार वाणी सुनने में आये, जैसे मैंने सुना है, क्या इसे असत्य कहकर इन्कार किया जा सकता है ? दिव्य वाणी सुनी जाती है जैसे तुम और मैं बातें कर रहे हैं ।"

शिष्य ने विवाद रहित हो स्वामी जी के विचार को अपनाया क्योंकि उनके शब्दों में दृढ़ विश्वास भरा था ।"

स्वामी विवेकानन्द 1898 ईस्वी में **क्षीर भवानी** आये थे और उन्होंने कहा था कि हमें 93 वर्षों के पश्चात् कश्मीर को पुनर्जीवित करने के लिए भगवती की शक्ति का आह्वान करना चाहिए ।

प्राकृतिक घटना स्थल

इस प्रकार का दिव्य कुण्ड भारत में और किसी स्थान पर नहीं है। समय-समय पर इसका जल रंग बदलता है। मैं स्वयं इस बात का साक्षी हूं । मैंने गुलाबी लाल, हल्का गुलाबी, हल्का सब्ज़, नींबू-ज़रद, दूधिया सफेद और मटयाला-सफेद रंग अलग-अलग समय पर बदलते देखे हैं । रंग बदलने का कोई नियम नहीं, न कोई विशेष समय । हल्का या गहरा काला रंग अनिष्ट सूचक माना जाता है।

मैंने स्वयं देखा है कि कुण्ड के जल में बुलबुले उठते हैं यह छोटे द्वीप के मन्दिर के गिर्द तीन रेखाएं बनाती हैं जो क्रम से पूरी नहीं अपितु इधर-उधर होकर भी कोई निपुण नियम दर्शाती हैं। यह रेखाएं देवी के चक्र का द्वार बताती हैं, ऐसी मान्यता है।

महाराज्ञी का चक्र या यन्त्र

चक्र रहस्यमय चिन्ह या प्रतिरूप होता है। प्रत्येक देवी का अपना-अपना चक्र होता है। महाराज्ञा क्षीर भवानी के चक्र के सात भाग हैं जो एक-दूसरे के अन्दर हैं। चक्र को यन्त्र भी कहते हैं। इसमें देवी माता अपनी शक्तियों सहित वर्णित होती हैं। तन्त्रों की भिन्न-भिन्न उपासना विधियों में जो लोग निष्णात होते हैं वे रहस्यात्मक चक्र के चिह्नों को शरीर के आन्तरिक तथा मनोवैज्ञानिक चक्रों का प्रतिरूप ही समझते हैं। योग्य गुरु की देख-रेख में वे इन चक्रों पर धारणा क्रमों का अवगहन कर योग-शक्तियां प्राप्त करते हैं। तन्त्र शास्त्र वेदों के समान आगम शास्त्र के अन्तर्गत हैं। स्थान-स्थान पर तन्त्रों में अन्तर होते हुए भी यह कृत्रिम रचनाओं से भिड़ते हैं। आगम में देवी की स्तुति के भिन्न-भिन्न प्रयोगों में शक्तियों की अनुरूपता बहुत पाई जाती है। देवी की विशेष शक्ति जिसकी वह प्रतिनिधि है बहुत समय तक पूजनीय रहती है। यह उपासना ब्राह्मण और बौद्ध रहस्यात्मक मेल दर्शाती है। तन्त्रों का प्रभाव हर देश, हर काल, हर जगह, प्रत्येक दर्शन और प्रत्येक शास्त्र पद्धति पर पड़ा है। तन्त्र उपासना के अनन्त क्रम हैं जिनके नाम और प्रकार भिन्न-भिन्न हैं। तन्त्र-साहित्य की इसके प्रसिद्ध प्रवर्तकों सहित अपनी एक खान है। कुछ तन्त्र-विशेष के नाम यह हैं :

आगम तन्त्र, यामल तन्त्र, समयाचार तन्त्र, वज्रयान तन्त्र, कापालिक तन्त्र, शैव तन्त्र, सिद्ध तन्त्र।

दूसरे सब आध्यात्मिक पूर्वीय विचारों की तरह तन्त्र शास्त्र भी एक प्रकार की उपासना है। तान्त्रिक प्रतिरूप और विधि मनुष्य को परम सुख की अवस्था तक पहुंचा देते हैं और परिणाम में मोक्ष प्राप्ति होती है। तन्त्र शासन में एक चित्रात्मक आकृति बनाते हैं जिसे चक्र, यन्त्र और योग भी कहते हैं। तन्त्रशास्त्र में महाराज्ञा देवी की, उपासना-पूजा के लिए, एक विशेष आकार वाला चित्र विधान किया गया है। इसे नीचे दिया गया है :
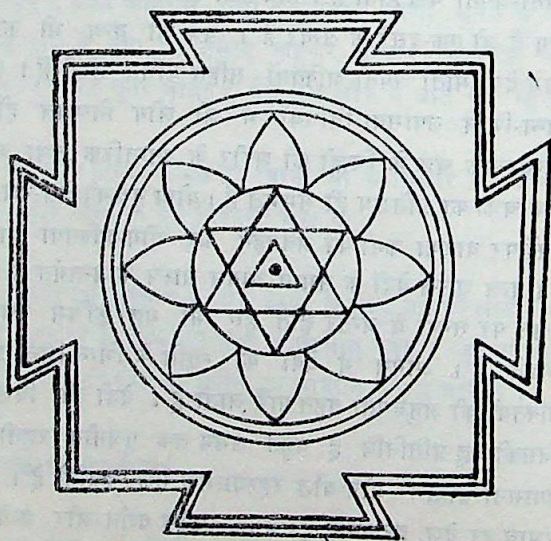
1. बिन्दु—केन्द्र विन्दु जिसका न कोई परिमाण है न परिधि।
पंचदशाक्षरी विद्या।

मूलमन्त्र—ॐ ह्लीं श्रीं रां क्लीं सौ: भगवत्ये राज्यै ह्लीं स्वाहा।

2. त्रिकोण —देवी का त्रिगुणमय स्वरूप और तदतीत भी अत: विश्वोतीर्ण अवस्था। माहेश्वरी जिसके अन्तर्गत महाकाली, महालक्ष्मी और महासरस्वती हैं।

3. षट्कोण —नीचे नोक वाला तिकोण देवी का और ऊपरी नोक वाला तिकोण शिव का। यह यामल रूप शिव-शक्ति का द्योतक है। षट्चक्र के आधार पर षट्शक्तियों की पूजा की जाती है।

4. वृत्त —जगत् और जीव का पारस्परिक सम्बन्ध। यह विश्वमय अवस्था है।

5. अष्टदल पद्म —पुर्यष्टक शरीर। पांच ज्ञानेन्द्रिय, मन, बुद्धि, अहंकार। पूजा प्रकार में इसे अष्टभैरव कहते हैं।

6. वृत्तत्रय —भू: भुव: स्व: त्रयात्मक गोलाकृति। जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति अवस्था व्यक्त करती है। इसे गुरुपंक्तित्रय कहते हैं।

7. द्वार अथवा संग्रह—यहां पर गणेश, कुमार, इन्द्रादि देवताओं की पूजा होती है।

मृंगीश-संहिता में यह श्लोक इस चक्र का संकेत देता है।

बिन्दुस्त्र्यश्रं षडश्रं च वृत्ताष्टबलमम्बितम्।
वृत्तत्रयं धरा सद्म राज्ञी श्री चक्रमीरितम्॥

पूजा विधि, न्यास आदि के लिए श्रीराज्ञाप्रादुर्भाव को देखिए।

श्रीमहाराज्ञी के श्रीचक्र द्वारा उपासना किसी योग्य गुरु के सम्पर्क में आकर ही करना श्रेयस्कर होगा। इस रहस्य विद्या का उद्घाटन करने में वे ही समर्थ होंगे।

आरती का शुभ समय

किसी अज्ञात महाशय के एक संस्कृत श्लोक के अनुसार महाराज्ञा कुण्ड का प्रकाशन अषाढ़ शुक्ल सप्तमी[1] (जून-जुलाई) को हुआ था। परन्तु लोग यहां प्रत्येक मास की शुक्लाष्टमी को आते हैं। मुख्य उत्सव त्यौहार के रूप में ज्येष्ठ शुक्ल अष्टमी (मई) को ही मनाया जाता है। यात्री यहां पहुंच कर मन्दिर के अहाते में प्रवेश करने से पूर्व महाराज्ञा घाट पर नहाते हैं और संध्या-तर्पण आदि करके ही पूजा के लिए नंगे पैर अन्दर जाते हैं। पुरोहित की सहायता से श्रद्धालु घी[2] के दिए (रत्नदीप) और धूप जलाकर, दूध, अर्घ्य और पुष्पों से देवी की पूजा करते हैं। देवी के कुण्ड में मिष्टान्न के वर्तुलाकार पिण्ड (कन्द), नावद, किश्मिश, बादाम आदि भेंट डालते हैं। कोई-कोई तो सुन्दर वस्त्र या झण्डी,

---

1. इस दिन वादी भर के ब्राह्मण (काश्मीरी पण्डित) घर के चौके में, बरामदे पर और आंगन में सातों रंगों से सजे सूर्य भगवान के मण्डल डालते हैं। सम्भवतः इसलिए कि इस दिन सूर्य उत्तरी गोलार्द्ध में उच्चतम स्थिति (summer solistus) में होता है।
2. गाय के दूध से बने घी के दिए उत्तम माने जाते हैं। वास्तव में धूप, रत्नदीप, तथा हवन-यज्ञ में इसी शुद्ध घी का प्रयोग करना श्रेयस्कर बताया गया है।

देवी के विग्रह पर चढ़ाते हैं। विशेष कर हवन पर ही झण्डी समर्पित की जाती है और चावल और दूध से बना क्षीर, अखरोट, बादाम, कन्द, नाबद की सात्विक भेंट चढ़ाई जाती है[1]। यह सब विशेष पूजा-विधि के अनुसार होता है। सहायता के लिए पुरोहित को दान-दक्षिणा से सन्तुष्ट किया जाता है। अन्त में हुतशेष नैवैद्य के रूप में उपस्थित जनों में बांटा जाता है। कुछ अंश घरों को भी अपने सगे सम्बन्धियों में बांटने के लिए लिया जाता है।

सायं संध्या के समय सैकड़ों-हजारों की संख्या में लोग कुण्ड के गिर्द एकत्रित होकर विशेष सामूहिक प्रार्थना करते हैं। इसके साथ शंख, ताल, मृदङ्ग, घंटा बजाये जाते हैं जिसकी अपूर्व ध्वनि-विशेष का अनुभव मन को अपार आनन्द देता है। पंचस्तवी में से भगवती के विशेष श्लोक, गौरीस्तुति और मां राज्ञा की स्तुति सामूहिक रूप में ध्वनिमय होते हैं। रत्नदीप अथवा घी के दिए हाथों में लेकर सब लोग इस समय खड़े रह कर ही आरती उतारते हैं। वायुमण्डल गूंज उठता है और शान्त वातावरण चतुर्दिक फैल जाता है। इससे सब लोगों का तन-मन मूलप्रकृति भगवती शक्ति महाराज्ञा की ओर लगा रहता हैं। क्या विचित्र दृश्य और अलौकिक समय बन जाता है। देखने से ही बनता है। आरती समाप्त होने पर लोग अपने-अपने स्थान पर आसीन होकर अपनी-अपनी रुचि अनुसार भजन गाते हैं, ध्यान मग्न होंते हैं या कीर्तन में लीन होते हैं। कई भजन मण्डलियां रात भर बाजे, मृदंग आदि बजाते हुए भक्तजनों को मोहित करते हैं। बहुत से भक्त रात भर देवी कुण्ड की प्रदक्षिणा करते हैं।

---

1. अत्र स्थिताभूच्छान्ता सा क्षीरखण्डाज्यभोजना।
   सात्विका सत्यरूपा सा देवी पंचदशाक्षरी॥
   श्रीराज्ञाप्रादुर्भाव 1-35 (पू०सं०)

प्रातः काल स्नान आदि कृत्य करके पूजा-आरती कर लोग अपने-अपने घरों की ओर प्रस्थान करते हैं। कुछ एक कुछ अधिक समय तक वहीं ठहरते हैं। वहां से विदा होने को मन भी नहीं करता है। ऐसा शुद्ध वातावरण भगवती की अपार कृपा से ही मिलता है।

प्रत्येक काश्मीरी पण्डित के घर की एक कुलदेवी अवश्य होती है। भगवती राज्ञा उनमें विशेष स्थान रखती है। घर में नवजात शिशु का आगमन हो, यज्ञोपवीत या विवाह के शुभ अवसर हों तो उनको भगवती का आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए अवश्य तत्काल या कालान्तर में क्षीर भवानी के चरण कमलों में लाया जाता है। क्षीर भवानी अधिक ब्राह्मण कुटुम्बों की कुलदेवी है।

क्षीर भवानी कुण्ड का शोध

पवित्र कुण्ड का शोध अब तक मेरी स्मृति के अन्तर्गत तीन-चार बार हुआ है। कुण्ड में से जो मूर्तियां मिलीं उनको मन्दिर में रखा गया है। एक अवसर पर मैंने स्वयं शोध कार्य होते देखा। यह कार्य 30 जनवरी, 1970 से आरम्भ होकर 10 जुलाई को समाप्त हुआ। बिजली का एक पम्प दिन-रात काम में लगा था। कीचड़-मिट्टी तह (पेंदे) से हटायी गयी। जल की बड़ी राशि बह निकली जिससे कुण्ड का जल ताज़ा और चमकदार बन गया। शोध के परिणाम-स्वरूप कुण्ड में जल कई स्थानों से बहने लगा। कुण्ड के केन्द्र में दूधिया जल बहता दिखाई दिया। कुण्ड से कीचड़-मिट्टी बाहर निकालते समय बहुत से सोने के भूषण, चांदी के बर्तन और मुद्रा (रुपया) आदि मिले जो भक्तों ने समय-समय पर समर्पित किए थे।

तीर्थस्थान में सुधार

यह तीर्थस्थान धर्मार्थ ट्रस्ट की देख-रेख में है। यात्रियों और दर्शकों के इस सुन्दर तथा सुरम्य स्थान को शुद्ध और उन्नतिशील रखने के लिए धर्मार्थ ट्रस्ट समय-समय पर यहां के सुधार में दत्त-चित्त और सावधान रहता है। अखिल भारत के इस धर्म स्थान को विस्तार देने के लिए समीप भूतकाल में ही आस-पास की भूमि मूल्य में प्राप्त कर ली गई थी, जिस पर हवन-शालाएं, विश्राम घर और दूसरे आवश्यक निर्माण कार्य किये गए हैं। कुण्ड के सामने 34′× 17′ पूजा मंडम बनवाया गया है। तीन हॉर्स पॉवर (horse-power) मोटर कुण्ड से जल निकास के लिए सुलभ किया गया है। कुण्ड का शोध अब दो तीन वर्ष के अनन्तर ही किया जाता है। मोटर पम्प के लिए एक शैड (sded) भी बनाया गया है। कुण्ड के जल के अधिक सुन्दर निखार के लिए इसकी दीवारें संगमरमर के पत्थर से सुसज्जित की गयी हैं। इसके गिर्द डले हुए लोहे की आड़ पहले से दृढ़तर बनवाई गई है। बिजली के प्रबन्ध में उन्नति की गई है। 18 कनाल अधिक भूमि प्राप्त करने से मन्दिर का बाहरी द्वार विशाल तथा सुन्दर निर्मित किया गया है। सारांश यह है कि धर्मार्थ ट्रस्ट, इस पवित्र और विख्यात तीर्थ को अधिक आकर्षक बनाता रहा है। आगे भी बहुत कुछ करना शेष है।

परिशिष्ट-क

1. श्रीमहाराज्ञी ध्यान (सटीक)

उद्यत्-दिवाकरसहस्ररुचिं त्रिनेत्रां
सिंहासनोपरिगतामुरगोपवीतां ।
खड्गाम्बुजाढ्य-कलशामृतपात्र-हस्तां
राज्ञीं भजामि विकसद्वदनारविन्दाम् ।।

भगवती महाराज्ञी, जो उदय करते हुए हजारों सूर्यों के समान दीप्तिवाली हैं, जिसके तीन नेत्र सूर्य, चन्द्र और अग्नि के समान प्रकाशमान हैं और जो सर्पराज को यज्ञोपवीत के बदले पहने हुए तथा जगद्दात्री के रूप में सिंहासन पर विराजमान है; उनके चारों हाथों में खड्ग, विकसित कमल, जलपूर्ण कलश और अमृतपात्र हैं और विकासशील सुन्दर-सुखकर मुखवाली है, उस सौम्य स्वरूप का मैं ध्यान करता हूं।

2. गौरीस्तुतिः

श्रीमदाद्य शंकराचार्यकृत स्तुतिः

लीलारब्ध-स्थापित-लुप्ताखिललोकां
लोकातीतैर् योगिभिरन्तर्-हृदि-मृग्याम् ।

बालादित्य-श्रेणि-समान-द्युति-पुंजां
गौरीम् अम्बां अम्बुरुहाक्षीं अहं ईडे ॥1॥

अर्थ—मैं कमल-नेत्र जगदम्बा पार्वती की स्तुति करता हूं जो लीला से ही सब लोकों की उत्पत्ति, स्थिति ौर लय करती है जिसको असाधारण बुद्धि वाले योगी अपने हृदय में खोजने के यत्न में लगे रहते हैं, और जिसका तेज अनन्त प्रभात-सूर्यों के (आह्लाददायक) प्रकाश के समान है।

आशा-पाश-क्लेश-विनाशं विदधानां
पादाम्भोज-ध्यान-पराणां पुरुषाणाम्।
ईशीं ईशार्धाङ्गहरां तां तनुमध्याम्, गौरीं० ॥2॥

अर्थ—परमेश्वर की जो अर्धाङ्गिनी ईश्वरी है, जो हर एक जीव की मध्यनाडी में परम सूक्ष्मरूप से और बाहिर से विश्व में अणुरूप से रहती है और जो (अपने) चरण कमलों के ध्यान में लगे हुए पुरुषों की आशाओं की फांसी के कष्ट को मिटाती है, उस जगत-माता गौरी को मैं प्रणाम करता हूं।

प्रत्याहार-ध्यान-समाधि-स्थिति-भाजां
नित्यं चित्ते निर्वृति-काष्ठां कलयन्तीम्।
सत्यज्ञानानन्दमयीं तां तडित्-आभां, गौरी० ॥3॥

अर्थ—प्रत्याहार, ध्यान, समाधि (पातंजल योग-दर्शन के अष्टांग-योग के अन्तरङ्ग नियमों) के पालन करने वाले मनुष्यों के चित्त में समाधि-सुख की पराकाष्ठा उत्पन्न कराने वाली सत् चित्-आनन्द स्वरूप वाली और बिजली के समान शोभा वाली जगन्माता गौरी को मैं प्रणाम करता हूं।

चन्द्रापीडानन्दित मन्द-स्मित-वक्त्रां
चन्द्रापीडालङ्कृत-लोलालकभाराम्
इन्द्रोपेन्द्राभ्यर्चित-पादाम्बुज-युग्मां, गौरी० ॥4॥

अर्थ—चन्द्रमा जिसका शिरोभूषण है ऐसे भगवान् शंकर से हर्षित होकर मन्द मुस्कान से भरे मुखवाली (पार्वती), जिसके केश-पाश सिर के भू ण बने चन्द्रमा से सुशोभित हैं और जिसके चरण-कमलों की जोड़ी की पूजा इन्द्र और भगवान् विष्णु करते हैं, उस कमल-नेत्र गौरी की मैं स्तुति करता हूं।

नानाकारैः शक्ति-कदम्बैर्भुवनानि
व्याप्य स्वैरं क्रीडति यासौ स्वयमेव।
कल्याणीं तां कल्पलतामानति-भाजां, गौरीं० ॥5॥

अर्थ—जो नाना रूप वाली अपनी अनन्त शक्तियों से सारे भुवनों में व्याप्त है और अपनी ही इच्छा से (सृष्टि, स्थिति और संहार का) खेल रचाती है, जो शरण में आये हुए भक्तजनों के लिए मङ्गल-स्वरूप है और कल्प-वृक्ष की बेल के समान उनके सब मनोरथों को सिद्ध करने वाली है उस कमल-नेत्र माता गौरी को मैं प्रणाम करता हूं।

मूलाधारात् उत्थितवन्तीं विधिरन्ध्रं
सौरं चान्द्रं धाम विहाय ज्वलिताङ्गीम्।
ध्येयां सूक्ष्मां सूक्ष्मतनुं तां तडित्-आभां, गौरीं० ॥6॥

अर्थ—जो कुण्डलिनी शक्ति मूलाधार से (अभ्यास द्वारा जगाने से) उदय करके (इडा-पिंगला अथवा प्राण-अपान रूप) सूर्य और चन्द्रमा के प्रकाशों को पार करके सुषुम्णा के रूप में ब्रह्मरन्ध्र

(सहस्त्रार) में जगमगाती है, जो बिजली की भांति सूक्ष्म से सूक्ष्मतर स्वरूपवाली है और जिसका योगी-जन ध्यान करते हैं उस कमल-नेत्र गौरी की मैं वन्दना करता हूं।

आदिक्षान्ताम् अक्षरमूर्त्या विलसन्तीं
भूते भूते भूते-कदम्बं प्रसवित्रीम्।
शब्दब्रह्मानन्दमयीं तां प्रणवाख्यां, गौरीं ॥7॥

अर्थ—जो (परा शक्ति) वर्णमाला के अ से क्ष तक अक्षरों की मूर्तियों (मातृका-चक्र) से विकसित हुई है, जो आकाश, वायु आदि पंच-महाभूतों में नाना प्रकार की स्थावर-जङ्गम सृष्टि को उत्पन्न करती है और जो शब्द-ब्रह्म अर्थात् अनाहत शब्द स्वरूपा है, जिसका वाचक ओंकार (प्रणव) हैं, उसी कमल-नेत्र माता गौरी की मैं वन्दना करता हूं।

यस्याः कुक्षौ लीनम्-अखण्डं जगत्-अण्डं
भूयो भूयः प्रादुर्-अभूत् अक्षतम् एव
भर्त्रा सार्धं तां स्फटिकाद्रौ विहरन्तीम्, गौरीं० ॥8॥

अर्थ—जिसके उदर में सारा ब्रह्माण्ड लीन हुआ और बार-बार सम्पूर्ण रूप से प्रकट हुआ—कल्पान्त के समय अखण्ड ब्रह्माण्ड बार-बार बीज रूप से लीन होकर कल्प के आदि में ज्यों का त्यों प्रकट होता है—और जो अपने भर्त्ता भगवान शंकर के साथ अभिन्न रूप से (सूर्य-कान्त रत्न के समान) कैलास पर्वत पर (—जीव के सहस्त्रार में) लीला करने वाली है उस सुन्दर माता पार्वती की मैं स्तुति करता हूं।

नोट—'विहरन्ती' का पाठान्तर 'अभिरामां' है जिसका अर्थ है 'बहुत सुन्दर स्वरूप वाली'।

यस्याम् एतत् प्रोतम् अशेषं मणिमाला
सूत्रे यद्वत् क्वापि चरं क्वाप्यकरं च।
तां अध्यात्म-ध्यान-पदव्या गमनींया, गौरीं० ॥9॥

अर्थ—जिस (संवित्-शक्ति) में यह सारा स्थावर-जङ्गम रूप जगत् तागे में पिरोए हुए मणियों की माला के समान ठहरा हुआ है और जिसका साक्षात्कार आत्म-ज्ञान द्वारा ही होता है उसी सुन्दर-स्वरूपा माता गौरी को मैं प्रणाम करता हूं।

नित्यः सत्यो निष्कल एको जगत् ईशः
साक्षी यस्याः सर्ग-विधौ संहरणे च।
विश्वत्राण-क्रीडन-शीलां शिव-पत्नीं, गौरीं० ॥10॥

अर्थ—जिस (लीलामयी मां) की सृष्टि रचने की विधि तथा संहार करने की क्रिया का देखने वाला (साक्षी), अवयव-रहित, सत्य-स्वरूप और नित्य-वस्तु केवल परमेश्वर ही है और जो अपनी इस क्रीड़ा में जगत् पर उपकार करने की स्वभाव वाली, भगवान् शिव की अर्धाङ्गिनी (स्वतन्त्र-शक्ति) है उस सुन्दरता-स्वरूपा माता पार्वती को मैं प्रणाम करता हूं।

प्रातः काले भावविशुद्धः प्रणिधानात्
भक्त्या नित्यं जल्पति गौरीदशकं यः।
वाचां सिद्धि सम्पदम् उच्चैः शिव-भक्तिं
तस्यावश्यं पर्वत-पुत्री विदधाति, गौरी० ॥11॥

अर्थ - जो भक्त-जन प्रतिदिन प्रातःकाल के समय शुद्ध अन्तःकरण हो भक्ति से और शरणागति से गौरीस्तुतिः में दस श्लोकों का पाठ (अर्थ-चिन्तन से) करता है उसको माता पार्वती अवश्य ही वाक्-सिद्धि, संपदा और परमशिव की उत्तम भक्ति प्रदान करती है।

इति गौरीस्तुतिः

3. देवीस्तुतिः

ॐ नमो भवान्यै

(श्री धर्माचार्यकृत पञ्चस्तवी से)

ददातीष्टान्भोगान्क्षपयति रिपून्हन्ति विपदो
दहत्याधीन्व्याधीञ्छमयति सुखानि प्रतनुते ।
हठादन्तर्दुःखं दलयति पिनष्टीष्टविरहं
सकृद्ध्याता देवी किमिव निरवद्यं न कुरुते ॥1॥

अर्थ—देवी का लगातार ध्यान करने से वह चाहे हुए भोगों को देती है, शत्रुओं का नाश करती है, आपदाएं हटाती है, मन के रोगों को जलाती है, शरीर के रोगों को शान्त करती है, सुखों का विस्तार करती है, अन्तःकरण के दुखों को अपनी इच्छा के बल से नष्ट करती है, प्यारों के वियोग को पीसती है, इस प्रकार वह कौन से दोष हैं जिनको वह दूर नहीं करती है।

अजानन्तो यान्ति क्षयमवशमन्योन्यकलहै-
रमी मायाग्रन्थौ तव परिलुठन्तः समयिनः ।
जगन्मातर्जन्मज्वरभयतमः कौमुदि ! वयं
नमस्ते कुर्वाणाः शरणमुपयामो भगवतीम् ॥2॥

अर्थ—हे जगन्माता ! हे जन्ममरण ज्वर के भय रूपी अन्धकार को नाश करने वाली चान्दनी ! यह सभी भिन्न-भिन्न मतवादी आपके सच्चे स्वरूप को न जानते हुए एक-दूसरे के साथ तर्क-वितर्क करने के कारण आपके मायारूपी फंदे में फंसते हुए लाचार होकर (जन्ममरण रूप चक्र में पड़कर) नाश को प्राप्त होते हैं। हम आपकी शरण में आए हुए भक्त आप ऐश्वर्य से शोभायमान भगवती को नमस्कार (देहाभिमान को अर्पण) करते हुए शरण में आते हैं।

मनुष्यास्तिर्यञ्चो मरुत इति लोकत्रयमिदं
भवाम्भोधौमग्नं त्रिगुणलहरीकोटिलुठितम् ।
कटाक्षश्चेदत्र क्वचन तव मातः ! करुणया
शरीरी सद्योऽयं व्रजति परमानन्दतनुताम् ।।3।।

अर्थ—मनुष्य, पशु, पक्षी आदि और देवता इस प्रकार इनका यह तीनों लोकों का समूह, तीन गुणों (सत्व, रज, तम) वाली करोड़ों लहरों से व्याकुल बना हुआ संसार सागर में डूबा हुआ है। हे मातः ! इनमें से किसी एक पर यदि आपकी दया से अनुग्रह की दृष्टि हो, तो वह जीव उसी क्षण परमानन्द-स्वरूप को प्राप्त होता है ।

पिता माता भ्राता सुहृदऽनुचरः सद्म गृहिणी
वपुः पुत्रों मित्रं धनमपि यदा मां विजहति ।
तदा मे भिन्दाना सपदि भयमोहान्धतमसं
महाज्योत्स्ने मातर्भव करुणाया सन्निधिकरी ।।4।।

अर्थ—हे महाप्रकशामयी माता ! जब (मरणकाल के समय) मुझे (मेरे) पिता, माता, भाई, सुहृद, नौकर, घर, पत्नी, शरीर, पुत्र, मित्र और धन भी छोड़ दें, तो उस समय दया करके मेरे भय तथा मोह के अन्धकार को नाश करती हुई जल्दी ही मेरे सामने प्रकट हो जाना (अर्थात् अपने चित्स्वरूप में लीन करना) ।

शिवस्त्वं शक्तिस्त्वं त्वमसि समया त्वं समयिनी
त्वमात्मा त्वं दीक्षा त्वमयमणिमादिर्गुणगणः ।
अविद्या त्वं विद्या त्वमसि निखिलं त्वं किमपरं
पृथक्तत्त्वं त्वत्तो भगवति ! न वीक्षामह इमे ।।5।।

अर्थ—हे भगवती ! आप ही शिवरूप हो, शक्तिरूप हो, सिद्धान्त रूप हो, सिद्धान्त बनाने वाली हो, आत्मा हो, उपदेशरूप

हो और यह अणिमादि सिद्धियां हो। आप ही गुणों का समूह हो। अज्ञान (माया) रूप हो, ज्ञानरूप चित्स्वरूप-भाव को प्रकट करने वाली माया-शक्ति हो और सभी कुछ आप ही हो। कौन सा तत्व आपसे भिन्न है, हम इस बात को नहीं जानते हैं।

असंख्यैः प्राचीनैर्जननि जननैः कर्मविलया-
द्गते जन्मन्यन्तं गुरुवपुषमासाद्य गिरिशम्।
अवाप्याज्ञां शैवीं क्रमतनुरपि त्वां विदितवा-
न्नयेयं त्वत्पूजास्तुतिविरचनेनैव दिवसान् ॥6॥

अर्थ—हे माता! (मेरी प्रार्थना है कि) मैं पिछले अनगिनत जन्मों द्वारा कर्मों के नष्ट होने से, इन जन्मों के अन्त होने पर (जीवन्मुक्त दशा में) गुरु-स्वरूप शिव को प्राप्त करके शिवरूप सिद्धान्त (चक्रेश्वरी रहस्य क्रम) पाकर अर्थात् उसका मनन और निदिध्यासन कर मनुष्य शरीर धारण करता हुआ भी आपको जानता रहूं और आपकी पूजा करने तथा स्तुति रचने में ही इस जन्म के बाकी दिन बिता दूं।

(श्रीमदाद्य शंकराचार्यकृत सौन्दर्यलहरी से—)

त्वदन्यः पाणिभ्यामभयवरदो दैवतगण-
स्त्वमेका नैवासि प्रकटितवराभीत्यभिनया।
भयात्त्रातुं दातुं फलमपि च वाञ्छासमधिकं
शरण्ये लोकानां तव हि चरणावेव निपुणौ ॥7॥

अर्थ—हे तीनों लोकों को शरण देने वाली (माता!) आपके सिवाय दूसरे सब देवता-गण दोनों हाथों से अभिनय कर अभयदान और वरदान देते हैं। आप ही एक ऐसी हैं जो अभयदान और वरदान देते समय हाथों से अभिनय नहीं करतीं। भय से रक्षा करने में और इच्छा के अनुकूल फल देने में आपके दो चरण ही निपुण हैं।

सुधासिन्धोर्मध्ये सुरविटपवाटी-परिवृते
मणिद्वीपे नीपोपवनवति चिन्तामणिगृहे ।
शिवाकारे मंचे परमशिवपर्यङ्क-निलयां
भजन्ति त्वां धन्याः कतिचन चिदानन्दलहरीम् ॥8॥

अर्थ—अमृत के समुद्र बीच, कल्पवृक्षों की वाटिका से घिरे हुए मणि द्वीप में, नीप (कदम्ब) वृक्षों के उपवन के बीच चिन्तामणियों के बने घर में, त्रिकोण मंच पर, परमशिव के पलंग पर विराजमान चिदानन्दलहरी स्वरूप आपका कोई विरले ही मनुष्य भजन (चित्स्वरूप के साथ एक होने का चिन्तन) करते हैं : वे धन्य हैं ।

भवानि ! त्वं दासे मयि वितर दृष्टिं सकरुणा-
मिति स्तोतुं वाञ्छन् कथयति भवानि त्वीमति यः ।
तदैव त्वं तस्मै दिशसि निजसायुज्यपदवीं
मुकुन्दब्रह्मेन्द्रस्फुटमुकुटनीराजितपदाम् ॥9॥

अर्थ – 'हे भवानी ! मुझ दास पर भी आपकी अपनी करुणा-भरी दृष्टि डाल' इस प्रकार जो मुमुक्षु स्तुति करते समय 'हे भवानि आप' (भवानि त्वं) इस पद का ही उच्चारण कर पाता है, उसे अपना (वह) सायुज्यपद (ब्रह्मात्मैक्य—जीव ब्रह्म की एकता) प्रदान करती हो जिसकी ब्रह्मा, विष्णु और इन्द्र अपने मुकुटों के प्रकाश से आरती उतारा करते हैं ।

श्रीदुर्गासप्तशती से—विश्व की रक्षा के लिए प्रार्थना—

या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः
पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः ।
श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा
तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम् ॥10॥

अर्थ—जो पुण्यात्माओं के घरों में स्वयं लक्ष्मी-रूप से, पापियों के यहां दरिद्रतारूप से, शुद्ध अन्तःकरण वाले पुरुषों के हृदय में बुद्धि से, सत्पुरुषों में श्रद्धारूप से और कुलीन मनुष्य में लज्जारूप में निवास करती है, उस आप भगवती दुर्गा को हम नमस्कार (चिद्रूप रूपा अवस्था में एकता का अनुभव) करते हैं। हे देवि ! आप सम्पूर्ण विश्व का पालन कीजिए—चिदानन्द स्वरूप का ज्ञान हम में प्रकट कीजिए।

(पञ्चस्तवी से)

शब्दब्रह्ममयि स्वच्छे देवि त्रिपुरसुन्दरि !
यथाशक्ति जपं पूजां गृहाण परमेश्वरि ॥11॥

अर्थ—अनाहत शब्द स्वरूपा ! तीनों मलों से रहित, निर्मल चित्स्वरूपा ! स्वयंप्रकाशरूपा ! तीनों अवस्थाओं में व्यापक सुन्दरि ! परमेश्वर की स्वातन्त्र्य शक्ति ! जैसी थोड़ी-बहुत मेरी शक्ति है वैसी इस मेरे जप और पूजा को स्वीकार करो।

नन्दन्तु साधकाः सर्वे विनश्यन्तु विदूषकाः।
अवस्था शाम्भवी मेऽस्तु प्रसन्नोऽस्तु गुरुः सदा ॥12॥

अर्थ—सभी मोक्ष चाहने वाले साधक सुखी रहें। आत्मा को दूषित बनाने वाली वृत्तियां नष्ट हों। मुझे शिव-स्वरूपिणी अवस्था प्राप्त हो। मेरे गुरुदेव मुझ पर सदा अनुग्रह करते रहें।

न जानामि ध्यानं तव चरणयोः प्रीतिजननं
न जानामि न्यासं मननमपि मातर्न गिरिजे !
तदेतद्क्षन्तव्यं न खलु सतरोषः समुचितः
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥13॥

अथ—हे गिरिजा ! आपके ज्ञान-क्रिया रूप चरणों में प्रीति (निरन्तर चिन्तनरूप भक्ति) उत्पन्न करने वाली ध्यान की युक्ति मैं नहीं जानता हूं, न न्यास (आत्मसमर्पण रूपा प्रपत्ति-विद्या) जानता हूं और न ही आपके चित्स्वरूप के मनन की युक्ति ही प्राप्त है। इसके लिए आप मुझ पर क्षमा करें क्योंकि आपको मुझ (भक्त) पर क्रोध करना उचित नहीं है। कुपुत्र तो पैदा हो सकता है परन्तु माता कभी भी अपनी सन्तान पर उल्टा नहीं करती।

इति श्रीदेवीस्तुतिः

---

4. श्री जगदम्बा स्तुतिः

शिवस्वरूप में लीन श्री स्वामी विद्याधर जी बीसवीं शताब्दी के पूवार्ध में काश्मीर के महान् वैरागी, उच्चकोटि के ज्ञानी तथा साधना-सिद्ध योगी सन्त हुए हैं। उन्होंने जन-विख्यात सिद्ध महात्मा स्वामी राम से परमार्थ-पथ की दीक्षा प्राप्त की थी। स्वामी राम जू की प्रसिद्धि से काश्मीर शैव (त्रिक) दर्शन का प्रचार फिर से होने लगा जो पूर्व कई शताब्दियों से लुप्तप्राय हो रहा था। उनके प्रधान शिष्य स्वामी महताब काक, स्वामी विद्याधर तथा स्वामी गोविन्द कौल द्वारा अद्वैत शैवमत का यह विशेष वृक्ष काश्मीर की ऋषि-वाटिका में फलता रहा। स्वामी महताब काक के प्रधान शिष्य शैवाचार्य ईश्वरस्वरूप श्री स्वामी लक्ष्मण जू ने अभिनव गुप्त पाद द्वारा महकाई हुई इस विभूति को ईश्वर-आश्रम, ईशबर (निशात) से विदेशों तक फैलाया। स्वामी गोविन्द कौल और उनके अनुयाई इस परम्परा को काश्मीर शैव (त्रिक) आश्रम, फतेकदल के द्वारा आगे चलाते रहे। स्वामी विद्याधर जी ने 1947 के आस-पास शैव

आश्रम, कल्याण केन्द्र की करण नगर में स्थापना की। उनके शिष्यों में से विभूतिमान श्री श्रीकण्ठ रैना की अध्यक्षता में श्रीनगर में और स्वामी महादेव जुव के द्वारा रतनीपुर, पुलवामा में प्रचार कार्य और सत्सङ्ग चलते रहे।

परन्तु खेद से कहना पड़ता है कि काश्मीर में बढ़ते हुए आतंकवाद ने 1989 के आरम्भ में उग्ररूप धारण किया और विशेषत: पीडित काश्मीरी पण्डित जाति को बे-घर होकर भागना पड़ा। वे अपने ही विशाल देश भारत में शरणार्थी बन गए। इस अनिश्चित अवस्था तथा शोचनीय दशा में एकमात्र आश्रय जगत् अम्बा ही तो है।

स्वामी विद्याधर जी अपने साधनाकाल में पवित्र वातावरण से पूर्ण प्राय: काश्मीर के वनों में तपस्या करते रहे। जब कभी श्रीनगर जाते तो अधिक समय क्षीरभवानी महाराज्ञी की पुण्यस्थली तुलमुल में ही एकान्त-वास में बिताते। प्रतिमास की शुक्ल अष्टमी के अवसर पर सहस्रों श्रद्धालु जन जो वहां जाते उनको स्वामी जी परमार्थ उपदेश से सन्तुष्ट करते। वे उन्हें भगवान शिव के विशेष मन्त्र '**शिबाय नम ओम्, शिवाय नमः ओम्, शिवाय नम ओम् नमः शिवाय**' का प्रेमपूर्वक कीर्तन कराते, शास्त्री से विशेष श्लोकों का अथवा स्वरचित जगत्-अम्बा स्रोत का पाठ कराते। वही उत्तम स्रोत्र कश्मीरी भाषा में पद्य-अनुवाद सहित यहां भक्त-जन-मन के सन्तोष के लिए दिया जाता है। (सम्पादक)

अथ श्री जगदम्बा स्तुतिः

(संस्कृत में रचित-स्वामी विद्याधर जी)

विश्वेश्वरी निखिलदेवमर्हर्षि पूज्या
सिंहासना त्रिनयना भुजगोपवीता ।
शङ्खाम्बुजास्यऽमृतकुम्भक पञ्चशाखा
राज्ञी सदा भगवती भवतु प्रसन्ना ॥1॥

जन्माटवी प्रदहने दववह्निभूता
तत्पादपङ्कजरजौगतचेतसां या ।
श्रेयोवतां सुकृतिनां भवपाशभेत्री-राज्ञी० ॥2॥

देव्या यया दनुजराक्षसदुष्टचेतो
न्यग्भावितं चरणनूपुर शिञ्जितेन ।
इन्द्रादिदेवहृदयं प्रविकासयन्ती-राज्ञी० ॥3॥

दुःखार्णवे हि पतितं शरणागतं या
चोद्धृत्य सा नयति धाम परं दयाब्धिः ।
विष्णुर्गजेन्द्रमिव भीतभयापहर्त्री—राज्ञी० ॥4॥

श्री जगदम्बा तुता

(काश्मीरी में अनुवाद—स्वामी महादेवजुव)

जगत् ईश्वरी यमिस सांर्य दीव महर्ष छि पूज़ान्
सिंहासनस प्यठ बिहित त्रिनितर सरफ नाल्य ।
अथि छिस खड़क अमर्यंत नोट ब्यीय शङ्ख त पम्पोश
नित बंञातनम प्रसन सुय राज्ञा भवानी ॥1॥

अम्यसन्ध्य चरण मनस मंज यिम धारवञ छिय
ज़ालान तिहुन्द ज़नम-वन ज़न दाव-अग्नि ।
भक्त्यन यिथ्यन युस चटान संसार-बन्धन—नित० ॥2॥

यमि दीवियि असर, दानव ब्यियि दुरज़न
तल हेत्यमतिय च़रण के रुनि श्रुञ श्रुने सत्य ।
इन्द्राद्यकन हृदय छय युस फोलरावान—-नित०॥3॥

शरणागतन युस दयासागर भवानी
दुःख सागर मंज कडित मुक्ती दिवानी ।
मयि मंज़ रछान यिथ रोछुय नारायणन होस—नित० ॥4॥

यस्या विचित्रमखिलं हि जगत्प्रपञ्चं
कुक्षौ विलीनमपि सृष्टविसृष्टरूपात् ।
आविर्भवत्यविरतं चिदचित्स्वभावं-राज्ञी० ॥5॥

यत्पादपङ्कजरजःकणजः प्रसादा-
द्योगीश्वरैर्विगतकल्मषमानसैस्तत् ।
प्राप्तं पदं जनिविनाशहरं परं सा-राज्ञी० ॥6॥

यत्पादपङ्कजरजांसि मनोमलानि
सम्मार्जयन्ति शिवविष्णु विरिञ्चिदेवाः ।
मृग्यान्यऽपश्चिमतनोः प्रणतानि माता-राज्ञी० ॥7॥

यत्पाद चिन्तनदिवाकररश्मिमाला
चान्तर्बहिष्करण वर्ग सरोजषण्डम् ।
ज्ञानोदये सति विकाश्य तमोपहर्त्री-राज्ञी० ॥8॥

यद्दर्शनामृतनदी महदौघयुक्ता
संप्लावयत्यखिलभेदगुहास्त्वनन्ता ।
तृष्णाहरा सुकृतिनां भवतापहर्त्री-राज्ञी० ॥9॥

ज़ंगम त थावर जगत नाना प्रकारी
वुत्पत त ब्यियि प्रलय रूप किञ नित यमिस मंज ।
लीन आसिथय ब्यियि ततिय नोन नेरवुन छुय-नित० ॥5॥

यूगीश्वरव यसन्ध्यव तलपंत्य मलं सत्य
गालिथ पनुन मनुक मल प्रोवुक परमधाम ।
यव किञ तिमन अद छ्योनुय ज्यनमरन बन्धन-नित० ॥6॥

यम्यसन्ध्य च़रण शिव विष्णु ब्रह्मा छि छ़ारान
पश्चातजन्य पुरषिय तिमनय नमान छिय ।
यम्यसन्ज़ पदन हंज़ गरद मनमल छे कासान-नित० ॥7॥

यम्यमन्ध्य च़रण स्मरन सत्य सिर्यिसंज़ ज़चमाल
अन्तःकरण बहिष्करण पम्पोशि डल सय
फुलवान छि ज्ञानचि विज़े घट सार ति कासान-नित० ॥8॥

दर्शन नंदियि यसन्ज़े अमर्यतवोञ भंरिथय
भिन-भावचन गुफन यूप अनवञ अनन्तय ।
चटवञ छे त्रेश सतजनन सन्ताप वशरान-नित० ॥9॥

हंसस्थिता सकलशब्दमयी भवानी
वाग्वादिनी हृदयपुष्करचारिणी या ।
हंसीव हंसरजनीश्वरवह्निनेत्रा-राज्ञी० ॥10॥

या सूर्यसोमवपुषा सततं सरन्तीं
मूलाश्रयात्तडिदिवा विधिरन्ध्रमीढ्या ॥
मध्यस्थिता सकलनाडिसमूहपूर्णा-राज्ञी० ॥11॥

चैतन्यपूरित समस्त जगद्विचित्रा
मातृप्रमेयपरिमाणतया चकास्ति ।
या पूर्ण वृत्त्यहमिति स्वपदाधिरूढा-राज्ञी ॥12॥

या चित्क्रमाक्रमतया प्रविभाति नित्या
स्वातन्त्र्यशक्तिरमला गतभेदभावा ।
स्वात्मस्वरूपसुविमर्शपरैः सुगम्या-राज्ञी० ॥13॥

या कृत्यपञ्चकनिभालनलालसैस्तैः
सन्दृश्यते निखिलवेद्यगतापि शश्वत् ।
सान्तर्धृता पर प्रमातृपदं विशन्ती-राज्ञी० ॥14॥

हंसस खसिथ भगवती युस हंसरूपी
कथ करवनिय त नच़वञ्न हृत्कमलसय मंज़।
ज़न हंसिनी सिर्यि-चन्द्रम-अग्न नेत्रव—नित० ॥10॥

युस मूलाधारा प्यठ सदा सिर्यि-चन्द्र रूपी
फेरान छे ज़न वुज़मला ब्रह्मरन्ध्रसय तान्य।
नाडी ख्यलस युस बिहित मंजबाग छे पूरण-नित० ॥11॥

सौरुय यि चेतन ज़गत नाना प्रकारिय
जान ज़ानबुन त ज़ाननीय त्रयि सत्य छु शूमान।
युस, पूर्ण वृंच अहमकिञ्न पननिस पदस प्यठ-नित० ॥12॥

युस चित् शखत क्रम अक्रम किञ्न भासवञ्न नित
स्वतन्त्रभाव निर्मल बनि भाव रोस्तुय।
लभनीय तिमन यिम करान छिय आत्म चिन्तन-नित०॥13॥

यिम ज़न छि पंचक़ृत्यकिस लग्यमत्य विमर्शस
मंज़ प्रथकुने प्रतकुह्, मंज छिस बुछान तिम।
यिछ़ आसवञ्न त परप्रमातृ पदस अच़बञ्न-नित० ॥14॥

सानुत्तरात्मनि पदे परमाऽमृताब्धौ
स्वातन्त्र्यशक्तिलहरीव बहिः सरन्ती ।
संलीयते स्वरसतः स्वपदे सभावा-राज्ञी० ॥15॥

मेरोः सदैव हि दरीषु विचित्रवाग्भि-
र्गायन्ति यां भगवती परिवादिनीभिः ।
विद्याधरा हि पुलकाङ्कित विग्रहा सा-राज्ञी० ॥16॥

राज्ञीं सदा भगवतीं मनसा स्मरामि
राज्ञीं सदा भगवतीं वचमा गृणामि ।
राज्ञीं सदा भगवतीं शिरसा नमामि
राज्ञीं सदा भगवतीं शरणं प्रपद्ये-राज्ञी० ॥17॥

राज्ञ्याः स्तोत्रमिदं पुण्यं यः पठेद्भक्तिमान्नरः ।
नित्यं देव्याः प्रसादेन शिवसायुज्यमाप्नुयात्-राज्ञी० ॥18॥

इति श्री जगदम्बास्तुतिः राजानक
विद्याधर विरचिता शुभदा वो भूयात्
इति शिवम् ॥

युस पान्‍पान पननि थान वुथान तिथय पाठ्य
यिथ पाठ्य अमृत समन्दर मंज वोथ तरंगा ।
सोरुय ह्यथय व्ययि गछ़ान मीलिथ तोतय छ्य-नित० ॥15॥

वच़नव कमव कमव किञ्न सेतारनय प्यठ
नित यम्यसुन्दुय समीर पर्बतवन गुफन मंज ।
विद्याधरय छि ग्यवबञ्न रूमहर्ष सस्यतिय-नित० ॥16॥

निथ छुस सुरान मनस मंज राज्ञा भवानी
निथ छ मम्य सुय मुखसप्यठ राज्ञा भवानी ।
निथ छुस नमान बतमिसय राज्ञा भवांनियि
निथ छुस शरण ब तमिसय राज्ञा भवांनियि ॥17॥

युस भक्तिमान पुरुष राज्ञा तुता यि परि ।
दीवी प्रसाद तस सिद्ध छु शिव-यूग ॥18॥

राजानक स्वामी विद्याधर जियन करमच
यि जगत्-अम्बीय हंज़ तुता बनिन
सार्यनय शुभफलस दिववञ्न ॥
इति शम्

परिशिष्ट-ख

महाराज्ञी राजराजेश्वरी राजर्यञ

(कश्मीरी भाषा में एक लीला)

राजर्यञ्ञ रानिब्राऽरी

लगय पादन व पाऽरी, राजर्यञ्ञ रानिब्राऽरी

बुथहा सुलिमुले, राऽज्ञा छे तुल्लमुले

दुध हय भावस डुलि डुले—राजर्यञ्ञ रानिब्राऽरी ॥

केंह वसान डूंग-नावन

रऽत्य रऽत्य फल छि प्रावन

केंह यिवान ननवाऽरी —राजर्यञ्ञ रोनिब्राऽरी ॥

अलम चानि लछिवज़य

केंह छि लोचि केंह छे थज़य

स्वर्ग-बोञ्जि अऽन्द्य अऽन्दिय —राजर्यञ्ञ रानिब्राऽरी ॥

साम छिय सुनसन्दिय

भखत्य छिय अऽन्द्य अऽन्दिय

लागय व पोश-गोन्दिय —राजर्यञ्ञ रानिब्राऽरी ॥

शाहमार छुय चे हटे

प्रज़ा छय चे मटे

यिमहा व लटि लटे —राजर्यञ्ञ रानिब्राऽरी ॥

म्य छयना चाऽनी कल
जाय दिय म्य पादन तल
वथरावय व मखमल —राजयंञ राजिब्राऽरी ॥

चन्दन कुल मंज़ नागस
विहित छख पोश-बागस
फम्पोश पूज़ि लागस —राजयंञ राजिब्राऽरी ॥

दुदर्हामि द्युत म्य ताराह्
बोज़तम ज़ार-पाराह
कास्तन म्य लाचाऽरी —राजयंञ राजिब्राऽरी ॥

यस चोन नाव मशे
तस छय पश पशे
नरकग मंज़ सु क्रशे —राजयंञ राजिब्राऽरी ॥

युस चोन नाव स्वरे
तस क्या यम करे
जाय चाऽञ म्यानी घरे —राजयंञ राजिब्राऽरी ॥

राजयंञ राजिब्राऽरी

(शुभमस्तु सर्वेषाम्)

सार्यंनय बनिन शुभ

—:o:—

BOOKS ON KASHMIR

History of Kashmir Saivism
by Dr. B.N. Pandit

Vedanta Dindimah
by Janki Nath Kaul "Kamal"

Lal Ded—Her Life and Sayings
by Nila Kanth Kotru

Kshir Bhawani Spring
by Samsar Chand Koul

Kashmiri Pandit
by Anand Koul

Birds of Kashmir
by Samsar Chand Koul

Beautiful Valleys of Kashmir and Ladakh
by Samsar Chand Koul

Any Book on Kashmir can also be had fron

Utpal Publications
151-C, J & K Pocket
Dilshad Garden, Delhi-110095